[2019] 17 एस सी आर 331

हिंदुस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड और ए. एन. आर.

वी.

भारत और ओआरएस का संघ।

(2019 की लिखित याचिका (सिविल) संख्या 1074)

नवंबर 27,2019

[आर. एफ. नरीमन, सूर्या कान्ट और वी. रामसुब्रमणियन, जे. जे.]

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996: एसएस। 34 36 तक-पुरस्कार का स्वतः स्थगन-आयोजितः एस. 36 जब एस के साथ पढ़ा जाता है। 35 यह बताता है कि अंतिम निर्णय का प्रवर्तन सी. पी. सी. के तहत होगा, और उसी तरह से जैसे कि यह अदालत का आदेश था-कारण

एस के लिए डी 'एट्रे। 36 यह केवल यह स्पष्ट करने के लिए है कि जब कोई मध्यस्थता पुरस्कार चुनौती के लिए अतिसंवेदनशील नहीं है, या तो इसलिए कि इसे अलग करने के लिए आवेदन करने का समय समाप्त हो गया है, या ऐसा आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है, तो पुरस्कार, अंतिम और बाध्यकारी होने के कारण, सी. पी. सी. के तहत लागू किया जाएगा, जैसे कि यह अदालत की एक डिक्री थी। 36 कुछ नकारात्मक अनुमान लगाने के रूप में, अर्थात्, जहां एस के तहत आवेदन करने का समय है। 34 अवधि समाप्त नहीं हुई है और इसलिए, समय के भीतर इस तरह के आवेदन पर,

स्वचालित-स्टे एनस्यूज़, एस में कुछ पढ़ना है। 36 जो कि बिल्कुल भी नहीं है-इसलिए, पुरस्कार का स्वचालित ठहराव एक नियम नहीं है-इसके अलावा, इस निर्माण में बाकी पर विचार करने की छूट है। 36 , जो एस के तहत अनुप्रयोगों से संबंधित है। 34 जिन्हें खारिज कर दिया गया है, जिससे एक पुरस्कार अंतिम होता है और एस के साथ पढ़ने पर बाध्यकारी होता है। 35 जो तब सी. पी. सी. के तहत प्रवर्तनीय हो जाता है, पुरस्कार को इस उद्देश्य के लिए एक डिक्री के रूप में माना जा रहा है

एस की भाषा। 9 मध्यस्थता अधिनियम, 1996, जो विशेष रूप से एक पक्ष को मध्यस्थता पुरस्कार देने के बाद राहत के लिए न्यायालय में आवेदन करने में सक्षम बनाता है, लेकिन इससे पहले कि इसे धाराओं के अनुसार लागू किया जाए। 36 . " एस में ये शब्द। 9 कोई परिवर्तन नहीं हुआ है

2015 या 2019 के संशोधन अधिनियमों के कारण-आगे, एस. 36, जैसा कि मूल रूप से अधिनियमित किया गया था, का उद्देश्य यू. एन. सी. आई. टी. आर. ए. एल. मॉडल कानून के Art.36 (2) को समाप्त करना नहीं था, बल्कि वास्तव में भारत में दिए गए पुरस्कारों के संदर्भ में चेरी सिद्धांत में दो काटने को दूर करना था, और यह तथ्य कि एक अंतिम अधिनियम को लागू करना।

पुरस्कार, जब एस के साथ पढ़ा जाता है। 35 , सी. पी. सी. के अधीन होना है, पुरस्कार को अदालत की डिक्री के रूप में मानना है-संशोधित एस। 36 , होने के नाते

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2019: एस. 13 संशोधन अधिनियम, 2019 द्वारा बी. सी. सी. आई. के निर्णय के आधार को हटाना - क्या 2019 संशोधन अधिनियम * बी. सी. सी. आई. के आधार को हटा देता है

उच्चतम न्यायालय का निर्णय-आयोजितः यह तर्क कि किसी निर्णय के आधार को हटाने का प्रश्न तब तक नहीं उठ सकता जब तक कि निर्णय विधायिका के दिमाग में मौजूद न हो और संबंधित उद्देश्यों और कारणों के विवरण में स्पष्ट रूप से संदर्भित न हो-महत्वपूर्ण यह देखना है कि क्या सार में, किसी विशेष निर्णय का आधार वास्तव में हटा दिया गया है, न कि क्या उस निर्णय को संशोधन अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में संदर्भित किया गया है जो इसके आधार को हटाने का प्रयास करता है-आगे

तर्क है कि एस। 87 एस की पुनरावृत्ति के अलावा और कुछ नहीं है। 26 एस की योजना को भी अस्वीकार कर दिया जाता है। 87 एस से अलग है। 26 , और यह कहने में स्पष्ट है कि न्यायालय की कार्यवाही केवल मध्यस्थता कार्यवाही पर परजीवी है-इसलिए, यह स्पष्ट है कि केवल मध्यस्थता कार्यवाही को यह देखने के लिए देखा जाना चाहिए कि क्या 2015 का संशोधन अधिनियम लागू होता है-तर्क कि तत्काल मामले में इस न्यायालय के किसी निर्णय पर पहले उसके आधार को हटाए बिना सीधा हमला किया गया था, इसलिए खारिज कर दिया जाता है-विधायी क्षमता-मध्यस्थता और

सुलह अधिनियम, 1996।

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996: एस 87 एस की शुरूआत की संवैधानिक वैधता। 87 मध्यस्थता अधिनियम, 1996 और धाराओं को हटाना। 26 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा 2015 के संशोधन अधिनियम का-आयोजितः एस पर कानून। 26 2015 के संशोधन अधिनियम को बी. सी. सी. आई. में बहुत स्पष्टता के साथ निर्धारित किया गया था। 26 , न्यायालय ने सरकार को आगाह किया कि प्रस्तावित अधिनियमों को लागू करने का तत्काल प्रभाव। 87 कथन के सीधे विपरीत होगा और

2015 के संशोधन अधिनियम के उद्देश्य और कारण, जिसमें यह स्पष्ट किया गया था कि 2015 के संशोधन अधिनियम से पहले के कानून के परिणामस्वरूप मध्यस्थता कार्यवाही के निपटारे में देरी हुई और इसमें वृद्धि हुई।

मध्यस्थता मामलों में अदालतों द्वारा हस्तक्षेप जो मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के एक प्राथमिक उद्देश्य को विफल करने की प्रवृत्ति रखता है-इसके बाद इस हितकारी प्रावधान को हटाना और धाराओं को लागू करना। 87 इसके स्थान पर यह पूरी तरह से बिना किसी औचित्य के और 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के विपरीत होगा, जिसे एक विस्तृत विधि आयोग की रिपोर्ट के अनुसार अधिनियमित किया गया था, जिसमें विभिन्न हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ।

मूल 1996 के क़ानून के काम करने में दुर्बलताएँ-एस की शुरूआत। 87 और एस को हटाना। 26 इस प्रकार 2015 के संशोधन अधिनियम को स्पष्ट रूप से मनमाना बनाया गया था

अनुचित रूप से, पर्याप्त निर्धारण सिद्धांत के बिना और लोक हित के विपरीत मध्यस्थता अधिनियम, 1996 और 2015 के संशोधन अधिनियम-मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 द्वारा अधीन होने की मांग की गई। 26 .

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996: एस. 34-यह अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि एस के तहत एक आवेदन। 34 अधिनियम, 1996 की संक्षिप्त कार्यवाही एक नियमित वाद की प्रकृति में नहीं है -

परिणामस्वरूप, एस के तहत एक मध्यस्थता पुरस्कार की समीक्षा करने वाला न्यायालय। 34 पुरस्कार पर अपील में नहीं बैठता है, और यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण संभव है, तो किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016: एस. 3 (7)

'निगमित व्यक्ति' शब्द की व्याख्या-याचिका है कि सरकारी कंपनियों से धन की वसूली के लिए निगमित व्यक्ति की परिभाषा 's' में निहित है। 3 (7) दिवाला संहिता को या तो परिभाषा के तीसरे भाग में निहित "सीमित दायित्व के साथ" शब्दों के बिना पढ़ा जाना चाहिए या एस होना चाहिए। 3 (23) (छ) दिवाला संहिता की, जो उक्त प्रावधान में पढ़े गए व्यक्ति की परिभाषा हैः एक सांविधिक निकाय जो केंद्र सरकार के एक विस्तारित अंग के रूप में कार्य करता है, और सरकारी कार्यों को करता है, उसे दिवाला संहिता के तहत एक समाधान पेशेवर द्वारा या किसी अन्य निगमित निकाय द्वारा नहीं लिया जा सकता है-न ही ऐसे प्राधिकरण को अंततः दिवाला संहिता के तहत समाप्त किया जा सकता है-ऐसे कारणों से, 'निगमित व्यक्ति' की परिभाषा को एस में पढ़ना या पढ़ना संभव नहीं है। 3 (7) दिवाला संहिता।

दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016: उद्देश्य-आयोजितः दिवाला संहिता एक वसूली तंत्र होने के लिए नहीं है, संहिता का विचार एक ऐसा तंत्र है जो तनावग्रस्त परिसंपत्तियों का समाधान करने के लिए शुरू किया जाता है। दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016: धारा 5 (6)-'विवाद' की परिभाषा-आयोजितः एस में 'विवाद' की परिभाषा। 5 (6) दिवाला संहिता किसी वाद या मध्यस्थता कार्यवाही से संबंधित है।

तीन चीजों में से एक से संबंधित-(ए) ऋण की राशि का अस्तित्व; (बी) वस्तुओं या सेवाओं की गुणवत्ता; या (सी) प्रतिनिधित्व या वारंटी के उल्लंघन-जहां तक (ए) का संबंध है, [2019] 17 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

एस में निहित 'ऋण' शब्द की परिभाषा। 3 (11) दिवाला संहिता किसी भी व्यक्ति के दावे के संबंध में दायित्व या दायित्व को संदर्भित करती है। यह आवश्यक रूप से एक संविदात्मक या अन्य संबंध के अस्तित्व को स्वीकार करता है, जो कानून में पक्षों के बीच दायित्व या दायित्व को जन्म देता है-वही (सी) के लिए जाता है, क्योंकि प्रतिनिधित्व या वारंटी का उल्लंघन केवल एक व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है।

दूसरे पक्ष को अनुबंध-इसके अलावा, जब माल या सेवा की गुणवत्ता को (बी) में संदर्भित किया जाता है, तो यह फिर से कुछ संविदात्मक या कानून में अन्य संबंध को प्रस्तुत करता है जिसके द्वारा एक पक्ष दूसरे पर मुकदमा कर सकता है इसलिए, एक विवाद पक्षकारों के बीच होना चाहिए जैसा कि दिवाला संहिता के तहत समझा जाता है, जिसमें एक या नहीं होता है। VIII-सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-या सी. पी. सी. प्रकार का तंत्र। VIII

ए.

भारत का संविधानः Art.32-अधिकारिता लिखें, आह्वान करें-सटीक मात्रा से संबंधित पक्षों के बीच तथ्यात्मक विवाद याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में मध्यस्थता पुरस्कारों का आयोजनः यह है।

स्थापित कानून कि संविधान के Art.32 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय, सर्वोच्च न्यायालय एक विस्तृत प्रक्रिया शुरू नहीं कर सकता है।

विवादित तथ्यों की जांच-तत्काल मामले में, पक्षकारों के बीच निम्नलिखित से संबंधित तथ्यात्मक विवाद थाः (i) प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों से याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में देय मध्यस्थता पुरस्कारों की सटीक मात्रा; (ii) वह राशि जो प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा उक्त मध्यस्थता पुरस्कारों के तहत याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में पहले ही भुगतान की जा चुकी है और/या जमा की जा चुकी है; और (iii) क्या इन मध्यस्थता पुरस्कारों के संबंध में सक्षम न्यायालयों के स्थगन आदेश पारित किए गए थे, और यदि ऐसा है, तो क्या वे स्वतः स्थगन मोड के तहत थे या नहीं-इसलिए यह न्यायालय Art.32 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए एक विस्तृत कार्य नहीं कर सकता है।

मध्यस्थता के अनुसार भुगतान/जमा किए गए धन की स्थिति निर्धारित करने के लिए जांच-याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में पुरस्कार परिणामस्वरूप, इन कार्यवाहियों में इसके संबंध में कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है।

रिट याचिकाओं का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने

पकड़नाः 1.1 याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया था कि UNCITRAL मॉडल कानून के तहत, यदि एक ही देश में एक पुरस्कार पारित किया जाना है, चाहे वह घरेलू हो या अंतर्राष्ट्रीय, तो चेरी में दो काटने उपलब्ध होंगेः एक पुरस्कार को अलग रखने के समय और एक मान्यता के समय और हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ।

प्रवर्तन; और यह कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 ने इस मॉडल का पालन नहीं किया है और इसमें कहीं अधिक मजबूत प्रवर्तन व्यवस्था है क्योंकि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 में कहा गया है कि एक बार पुरस्कार को अंतिम कहा जा सकता है, तो इसे सी. पी. सी. द्वारा प्रदान किए गए तरीके से निष्पादित किया जा सकता है। यह कहना सही है कि धारा 36 मध्यस्थता अधिनियम, 1996 चेरी सिद्धांत में दो काटने का पालन नहीं करता है, क्योंकि जब भारत में दिया गया कोई पुरस्कार अंतिम और बाध्यकारी हो जाता है, तो इसे तुरंत लागू किया जाएगा।

सी. पी. सी. के अधीन, और उसी तरह जैसे कि यह न्यायालय की एक डिक्री थी, जब मान्यता और प्रवर्तन की बात आती है तो उसी आधार का कोई सहारा नहीं होता है। वास्तव में, धारा 36 के लिए कारण केवल यह स्पष्ट करने के लिए है कि जब कोई मध्यस्थ पुरस्कार चुनौती के लिए अतिसंवेदनशील नहीं है, या तो क्योंकि इसे अलग करने के लिए आवेदन करने का समय समाप्त हो गया है, या ऐसा आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है, तो पुरस्कार, अंतिम और बाध्यकारी होने के कारण, सी. पी. सी. के तहत लागू किया जाएगा जैसे कि यह अदालत की डिक्री हो। यह तब स्पष्ट हो जाता है जब मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 और 35 को एक साथ पढ़ा जाता है। [पैरा

13 , 22] [351 - ए-बी; 356-डी-एफ]

नेशनल एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड (नाल्को) v. प्रेस्टील एंड फैब्रिकेशन (पी) लिमिटेड और ए. एन. आर. (2004) 1 एस. सी. सी. 540; फिज़ा डेवलपर्स और इंटर-ट्रेड प्राइवेट लिमिटेड। लिमिटेड वी. एएमसीआई (इंडिया) प्रा. लिमिटेड और एन. आर. (2009) 17 एससीसी 796: [2009]

12 एस. सी. आर. 1-प्रति इनक्यूरियम।

राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम लिमिटेड बनाम

लॉयड्स इंसुलेशन इंडिया लिमिटेड (2005) 2 एससीसी 367-नहीं

सही कानून।

1.2 यह कहना कि धारा 34 के तहत चुनौती दिए जाने पर कोई पुरस्कार केवल इस तरह की चुनौती के कारण अप्रवर्तनीय हो जाता है

धारा 36 की भाषा के कारण बनाया जाना स्पष्ट रूप से गलत है। धारा 36 को एक अलग उद्देश्य के लिए अधिनियमित किया गया था। कब

धारा 35 के साथ पढ़े जाने पर, धारा 36 में केवल इतना कहा गया है कि अंतिम निर्णय का प्रवर्तन सी. पी. सी. के तहत होगा, और उसी तरह से जैसे कि यह अदालत की डिक्री थी। खंड पढ़ने के लिए 36 कुछ नकारात्मक निष्कर्ष निकालते हुए, अर्थात्, जहां धारा 34 के तहत आवेदन करने का समय समाप्त नहीं हुआ है और इसलिए, समय के भीतर ऐसा आवेदन किए जाने पर, एक स्वचालित-रोक लग जाती है, धारा 36 में कुछ पढ़ना है जो [2019] 17 एस. सी. आर.

वहाँ बिल्कुल नहीं है। इसके अलावा, यह निर्माण धारा 36 के शेष भाग पर विचार करने को छोड़ देता है, जो धारा 34 के तहत खारिज किए गए आवेदनों से संबंधित है, जिससे एक पुरस्कार अंतिम और बाध्यकारी हो जाता है (जब मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 35 के साथ पढ़ा जाता है) जो तब सी. पी. सी. के तहत प्रवर्तनीय हो जाता है, पुरस्कार को इस उद्देश्य के लिए एक डिक्री के रूप में माना जाता है। इसे मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 9 की भाषा से भी समर्थन मिलता है, जो विशेष रूप से एक पक्ष को मध्यस्थता पुरस्कार देने के बाद लेकिन धारा 36 के अनुसार इसे लागू करने से पहले राहत के लिए अदालत में आवेदन करने में सक्षम बनाता है। [पारस 25-27] [358 B-C, E-G]

लीला होटल्स लिमिटेड बनाम आवास और शहरी विकास निगम लिमिटेड (2012) 1 एस. सी. सी. 302: [2011] 13 एससीआर

156 - पर भरोसा किया।

डर्क इंडिया प्रा. लिमिटेड वी. महाराष्ट्र राज्य बिजली उत्पादन कंपनी लिमिटेड 2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन बम 481

संदर्भित किया गया।

—

1.3 पुरस्कार का स्वतः रुकना गलत है। धारा 36-भले ही मूल रूप से अधिनियमित की गई हो-का उद्देश्य इसे समाप्त करना नहीं है। UNCITRAL मॉडल लॉ का अनुच्छेद 36 (2), लेकिन वास्तव में भारत में दिए गए पुरस्कारों के संदर्भ में चेरी सिद्धांत पर दो काटने को दूर करने के लिए है, और यह तथ्य कि एक अंतिम पुरस्कार का प्रवर्तन, जब धारा 35 के साथ पढ़ा जाता है, सी. पी. सी. के तहत होना है, पुरस्कार को अदालत की डिक्री के रूप में माना जाता है। [पैरा 30] [360-बी-सी]

2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा बी. सी. सी. आई. के निर्णय के आधार को हटाना

2.1 यह तर्क दिया जाता है कि उन सभी प्रमुख मामलों में जिनमें किसी न्यायालय के निर्णय को उसके आधार को हटाकर रद्द कर दिया जाता है, विचाराधीन निर्णय को संबंधित उद्देश्यों और कारणों के विवरण में स्पष्ट रूप से संदर्भित किया गया है। इस तर्क को खारिज किया जाता है। यह देखना महत्वपूर्ण है कि क्या किसी विशेष निर्णय के आधार को वास्तव में हटा दिया गया है, क्या उस निर्णय को संशोधन अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में संदर्भित किया गया है या नहीं, जो इसके आधार को हटाने का प्रयास करता है। 2019 के संशोधन अधिनियम की धारा 15 बी. सी. सी. आई. के आधार को 2015 के हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड की धारा 26 को शुरू से ही हटा देती है।

भारत और ओआरएस का संघ।

संशोधन अधिनियम। चूंकि यह वह प्रावधान है जिसका बी. सी. सी. आई. के फैसले में अर्थ लगाया गया है, इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त फैसले के एक मौलिक आधार को धारा 26 को पूरी तरह से हटाकर हटा दिया गया है। जिस दिन से यह लागू हुआ था। [पारस 41,45] [370 सी-डी; 372-बी-सी]

श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड और अन्न। वी. ब्रॉड बरो नगरपालिका और ओआरएस। (1969) 2 एससीसी 283: [1970] 1 एस. सी. आर. 388; तमिलनाडु राज्य बनाम। अरूरन शुगर लिमिटेड (1997) 1 एस. सी. सी. 326: [1996] 8 पूरक। एस. सी. आर. 193; गोवा फाउंडेशन बनाम गोवा राज्य (2016) 6 एससीसी 602: [2016] 1 एससीआर 1025; * बी. सी. सी. आई. बनाम। कोच्चि क्रिकेट प्रा. लिमिटेड (2018) 6 एससीसी 287: [2018] 2 एस. सी. आर. 829 पर भरोसा किया।

2.2 समान रूप से, यह तर्क कि धारा 87 और कुछ नहीं बल्कि धारा 26 का पुनर्कथन है, और इसलिए सार में एक

इस बात की परवाह किए बिना कि ऐसी अदालती कार्यवाही 2015 के संशोधन अधिनियम के प्रारंभ से पहले या बाद में शुरू की जाती है और केवल अदालत पर सकारात्मक रूप से लागू होती है। यदि वे मध्यस्थता कार्यवाही से उत्पन्न होती हैं जो 2015 के संशोधन अधिनियम के प्रारंभ पर या उसके बाद शुरू की जाती हैं। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि धारा 87 की योजना धारा 26 से अलग है, और स्पष्ट रूप से कहा गया है

कि अदालती कार्यवाही केवल मध्यस्थता पर परजीवी है

कार्यवाही। इसलिए यह स्पष्ट है कि 2015 का संशोधन अधिनियम लागू होता है या नहीं, यह देखने के लिए केवल मध्यस्थता कार्यवाही पर विचार किया जाना चाहिए। [पैरा 46] [372-डी-एफ]

3. 2019 के संशोधन अधिनियम को संवैधानिक चुनौती

3.1 श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट में इस तथ्य के कारण धारा 87 को लागू करने की सिफारिश की गई थी कि

2015 की पहुंच पर उच्च न्यायालय के परस्पर विरोधी निर्णय

संशोधन अधिनियम उस समय जब समिति ने इस विषय पर विचार-विमर्श किया था। श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट दिनांकित [2019] 17 एस. सी. आर. है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

30.07.2017 , जो बी. सी. सी. आई. मामले में इस अदालत के फैसले से बहुत पहले है। विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा व्याख्या के कारण जो भी अनिश्चितता रही होगी, वह बी. सी. सी. आई. के फैसले के परिणामस्वरूप गायब हो गई है, 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 पर कानून को बहुत स्पष्टता के साथ निर्धारित किया गया है। को। इसके बाद इस हितकारी प्रावधान को हटा दें और अनुभाग लागू करें।

87 इसके स्थान पर, पूरी तरह से बिना किसी औचित्य के और 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के विपरीत होगा, जिसे एक विस्तृत विधि आयोग के अनुसार अधिनियमित किया गया था।

रिपोर्ट जिसमें 1996 के मूल क़ानून के काम करने में विभिन्न दुर्बलताएँ पाई गईं। इसके अलावा, यह भी समझ में नहीं आता है कि कैसे " अनिश्चितता और पूर्वाग्रह पैदा होगा, क्योंकि उन्हें फिर से सुनना पड़ सकता है, जिसके परिणामस्वरूप एक 'असंगत स्थिति' होगी। संशोधित कानून लंबित अदालती कार्यवाही पर लागू होगा।

जिसे उसके अनुसार निपटाना होगा, जिसके परिणामस्वरूप 2015 के संशोधन अधिनियम के लाभ होंगे।

अब लागू किया जा रहा है। इस तरह के प्रावधान का पालन करने के नुकसानों को इंगित करने के फैसले के बाद भी श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट (इस अदालत के फैसले का बिल्कुल भी उल्लेख किए बिना) को संदर्भित करना, धारा 87 और 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को हटाने को स्पष्ट रूप से मनमाना बना देगा, जिसे अनुचित रूप से, पर्याप्त निर्धारण सिद्धांत के बिना अधिनियमित किया गया था, और सार्वजनिक हित के विपरीत

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 और 2015 का संशोधन अधिनियम। यही कारण है कि बी. सी. सी. आई. के फैसले का एक प्रमुख निष्कर्ष यह है कि धारा 87 को लागू करने से मध्यस्थता कार्यवाही के निपटारे में देरी होगी, और मध्यस्थता मामलों में अदालतों के हस्तक्षेप में वृद्धि होगी, जो मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के उद्देश्य को विफल कर देगा, जिसे 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा मजबूत किया गया था। इसके अलावा, इस न्यायालय ने बार-बार यह अभिनिर्धारित किया है कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत एक आवेदन एक संक्षिप्त कार्यवाही है जो एक नियमित मुकदमे की प्रकृति में नहीं है। ए के रूप में

परिणामस्वरूप, धारा 34 के तहत एक मध्यस्थता पुरस्कार की समीक्षा करने वाला न्यायालय ऐसा करता है

पुरस्कार पर अपील में नहीं बैठना, और यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण संभव है, तो किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। [पैरा 47 49] [372-एच; 373-ए; 374-सी-एच; 375-ए-बी]

केनरा निधि लिमिटेड बनाम। एम. शशिकल 2019 एससीसी ऑनलाइन एससी 1244; एसोसिएटेड कंस्ट्रक्शन बनाम। पवनहंस हेलीकॉप्टर लिमिटेड (2008) 16 एस. सी. सी. 128 पर निर्भर था।

हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ।

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 जब मध्यस्थता पुरस्कारों की समीक्षा की बात आती है, (जहां एक अपील मूल कार्यवाही की पुनः सुनवाई की प्रकृति में है, जहां सफल होने की संभावना धारा 34 के तहत मध्यस्थता पुरस्कारों की प्रतिबंधित समीक्षा की तुलना में कहीं अधिक है), अपने आप में एक ऐसी परिस्थिति है जो 2015 के संशोधन अधिनियम, विशेष रूप से धारा 36 में किए गए संशोधनों को एक बैकबर्नर पर रखते हुए धारा 87 के अधिनियमन के खिलाफ है। इस कारण से भी, धारा 87 को अनुच्छेद 14 के तहत स्पष्ट रूप से मनमाना बताते हुए निरस्त किया जाना चाहिए। याचिकाकर्ताओं का यह कहना भी सही है कि जब 2015 में 19 साल से अधिक की अवधि के बाद विधायी हस्तक्षेप द्वारा धारा 36 के गलत निर्माण की शरारत को ठीक किया गया था, तो अब विपरीत दिशा में काम करने और उपरोक्त शरारत को वापस लाने का परिणाम स्पष्ट मनमानेपन में होता है। एक का पूर्वव्यापी पुनरुत्थान स्वतः-ठहराव न केवल मध्यस्थता अधिनियम, 1996 और 2015 संशोधन अधिनियम के उद्देश्य के विपरीत घड़ी को पीछे की ओर मोड़ता है, बल्कि इसके परिणामस्वरूप मध्यस्थता अधिनियम के तहत पहले से ही भुगतान किया जा चुका है।

धारा 36 में संशोधन किया गया-बिना रोक या सशर्त रोक की स्थिति में पुरस्कार धारकों को अब वापस लिया जा रहा है। वास्तव में, रिफंड

हमारे समक्ष कुछ मामलों में आवेदन दायर किए गए हैं, जिसमें प्रार्थना की गई है कि सशर्त स्थगन आदेशों के परिणामस्वरूप भुगतान के लिए जारी किए गए धन को निर्णय देनदार को वापस कर दिया जाए। [पैरा 50] [375-सी-जी]

* सांगयोंग इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम

एन. एच. ए. आई. (2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन 677-पर निर्भर।

3.3 इसके अलावा, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट में इसके प्रावधानों का उल्लेख नहीं किया गया था दिवाला संहिता। आई. डी. 1 पर दिवाला संहिता के आने के बाद, धारा 87 को लागू करने का परिणाम यह है कि इस न्यायालय के निर्णयों द्वारा निर्धारित स्वतः स्थगन सिद्धांत के कारण-जिसे केवल वर्तमान निर्णय द्वारा उलट दिया गया है।

- पुरस्कार-धारक अपने आपूर्तिकर्ताओं को अपने भुगतान पर चूक करके दिवालिया हो सकता है, जब इस तरह के भुगतान होंगे उन मामलों में मध्यस्थता पुरस्कारों से आगामी जहां कोई रोक नहीं है, [2019] 17 एस. सी. आर.

या उन मामलों में भी जहां सशर्त ठहराव दिया जाता है। इसके अलावा, एक मध्यस्थ पुरस्कार-धारक अपने पुरस्कार के फल से वंचित हो जाता है-जो आमतौर पर कई वर्षों के मुकदमेबाजी के बाद प्राप्त होता है-स्वचालित-ठहराव के परिणामस्वरूप, जबकि उसे अपने परिचालन लेनदारों को तत्काल भुगतान का सामना करना पड़ेगा, जो भुगतान मध्यस्थता पुरस्कारों के स्वचालित-ठहराव के कारण धन जारी नहीं होने के कारण नहीं हो सकता है, जिससे ऐसे पुरस्कार-धारक दिवाला संहिता की कठोरता से उजागर हो जाते हैं। इन सभी कारणों से, 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को हटाने के साथ-साथ 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा मध्यस्थता अधिनियम, 1996 में धारा 87 को शामिल करने को स्पष्ट रूप से रद्द कर दिया गया है।

संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत मनमाना। [पैरा 51] [375 एच; 376-ए-सी]

यू. ओ. आई. वी. परमेश्वरन मैच वर्क्स (1975) 1 एससीसी

305 [1975] 2 एससीआर 573; सरकार। ए. पी. वी. एन.

सुब्बारायुडु (2008) 14 एस. सी. सी. 702: [2008] 5 एससीआर 522

अप्रयोज्य रखा गया।

3.4 बी. सी. सी. आई. का फैसला लागू होता रहेगा ताकि

2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा किए गए हितकारी संशोधनों को उसके बाद शुरू की गई सभी अदालती कार्यवाही पर लागू करना। 23.10.2015 . [पैरा 54] [377-ए]

चुनौती

संवैधानिक

दिवालिया कोड

4.1 'निगमित व्यक्ति' का पहला भाग, जैसा कि परिभाषित किया गया है

याचिकाकर्ता का धारा में कुछ शब्दों को हटाने का तर्क 3 (7) दिवाला संहिता या दिवाला संहिता की धारा 3 (23) (जी) में कुछ शब्दों को धारा 3 (7) में जोड़ना स्वीकार नहीं किया जा सकता है। [पारस 57,58] [378-डी-ई-जी-एच; 379-ए]

4.2 वस्तुओं के कथन को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है

और एन. एच. ए. आई. अधिनियम के कारण, कि विकास और हिंदूस्तान निर्माण कंपनी सीमित v.

भारत और ओआरएस का संघ।

राष्ट्रीय राजमार्गों का रखरखाव एक सरकारी कार्य है जो भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची I की प्रविष्टि 23 के अंतर्गत आता है। इसके अलावा, राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956 की धारा 5 के तहत, केंद्र सरकार यह निर्देश दे सकती है कि राष्ट्रीय राजमार्गों के विकास या रखरखाव के संबंध में कोई भी कार्य केंद्र सरकार के अधीनस्थ किसी भी अधिकारी या प्राधिकरण द्वारा भी किया जाएगा। इस प्रावधान के तहत, राष्ट्रीय राजमार्गों से संबंधित गतिविधियों के निष्पादन का कार्य पहले राज्य को सौंपा गया था

एक "एजेंसी प्रणाली" के तहत सरकारें। हालाँकि इस प्रणाली ने 40 वर्षों की अवधि के लिए राज्य लोक निर्माण विभागों के माध्यम से काम किया, क्योंकि कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, केंद्र ने स्वयं एक राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के निर्माण के माध्यम से राष्ट्रीय राजमार्ग प्रणाली के विकास और रखरखाव को संभालने का फैसला किया। [पैरा 59] [379-बी-सी] 4.3 एन. एच. ए. आई. एक सांविधिक निकाय है जो केंद्र सरकार के एक विस्तारित अंग के रूप में कार्य करता है और कार्य करता है।

सरकारी कार्य जो स्पष्ट रूप से दिवाला संहिता के तहत एक समाधान पेशेवर द्वारा या किसी अन्य कॉर्पोरेट निकाय द्वारा नहीं लिए जा सकते हैं। न ही इस तरह के प्राधिकरण को अंततः दिवाला संहिता के तहत समाप्त किया जा सकता है। इन सभी कारणों से, दिवाला संहिता की धारा 3 (7) में 'कॉर्पोरेट व्यक्ति' की परिभाषा को पढ़ना या पढ़ना संभव नहीं है। जिस क्षण मध्यस्थता पुरस्कारों को चुनौती दी जाती है, एक परिचालन देनदार द्वारा देय राशि विवादित हो जाएगी, और इसलिए यह दिवाला संहिता के चंगुल से बाहर होगी। इसलिए, किसी भी दृष्टिकोण से, याचिकाकर्ता संख्या 1 द्वारा दिवाला संहिता के तहत एनएचएआई के खिलाफ कार्यवाही संभव नहीं है। [पारस 63,65] [386-ई-एफ; 387-एफ]

पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड और अन्र। वी. भारत संघ और ओआरएस। (2019) 8 एस. सी. सी. 416; स्विस रिबन (पी) लिमिटेड v. यूओआई (2019) 4 एससीसी

17 : [2019] 3 एस. सी. आर. 535-संदर्भित।

4.4 यह तर्क कि दिवाला संहिता की धारा 5 (6) के तहत 'विवाद' की परिभाषा की बात नहीं करती है

' किसी विवाद के पक्षकार, और इसलिए एक उप-ठेकेदार और प्रमुख नियोक्ता के बीच विवाद को शामिल करने के लिए व्याख्या की जा सकती है, जिसके साथ उप-ठेकेदार को अनुबंध की कोई गोपनीयता नहीं हो सकती है, [2019] 17 एस. सी. आर.

स्वीकार भी नहीं किया। दिवाला संहिता की धारा 5 (6) में 'विवाद' की परिभाषा तीन चीजों में से एक से संबंधित मुकदमे या मध्यस्थता कार्यवाही से संबंधित है-(ए) राशि का अस्तित्व। ऋण; (बी) माल या सेवा की गुणवत्ता; या (सी) प्रतिनिधित्व या वारंटी का उल्लंघन। जहां तक (क) का संबंध है, दिवाला संहिता की धारा 3 (11) में निहित 'ऋण' शब्द की परिभाषा किसी दावे के संबंध में दायित्व या दायित्व को संदर्भित करती है जो किसी भी व्यक्ति से देय है। यह अनिवार्य रूप से अभिधारणा करता है

एक संविदात्मक या अन्य संबंध का अस्तित्व, जो कानून में पक्षों के बीच दायित्व या दायित्व को जन्म देता है। यही बात (ग) के लिए भी लागू होती है, क्योंकि प्रतिनिधित्व या वारंटी का उल्लंघन केवल एक संविदाकारी पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को किया जा सकता है। इसके अलावा, जब माल या सेवा की गुणवत्ता का उल्लेख (बी) में किया जाता है, तो यह फिर से किसी संविदात्मक या अन्य कानूनी संबंध को अभिनिर्धारित करता है जिसके द्वारा एक पक्ष दूसरे पर मुकदमा कर सकता है। इसलिए यह स्पष्ट है कि एक विवाद पक्षों के बीच होना चाहिए जैसा कि दिवाला संहिता के तहत समझा जाता है, जिसमें आदेश VIII-A सी. पी. सी. प्रकार का तंत्र शामिल नहीं है। [पारस 68,69,71] [388-ई-एच; 389-ई]

6. प्रतिद्वंद्वी विवादों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि दोनों पक्षों के बीच निम्नलिखित के संबंध में एक तथ्यात्मक विवाद हैः (I) मध्यस्थता की सटीक मात्रा-प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों से याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में देय पुरस्कार; (II) राशि

जो कथित मध्यस्थता पुरस्कारों के तहत याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा पहले ही भुगतान और/या जमा किए जा चुके हों; और (III) क्या सक्षम लोगों के आदेशों पर रोक है। इन मध्यस्थता पुरस्कारों के संबंध में अदालतों को पारित किया गया था, और यदि ऐसा है, तो क्या वे स्वतः स्थगन मोड के तहत थे या नहीं। यह न्यायालय अनुच्छेद के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं कर सकता है।

32 संविधान ने मध्यस्थता के अनुसार भुगतान किए गए/जमा किए गए धन की स्थिति निर्धारित करने के लिए एक विस्तृत जांच शुरू की-याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में पुरस्कार। नतीजतन,

इन कार्यवाहियों में इसके संबंध में कोई निर्देश नहीं दिए गए हैं। [पारस 78,79,82] [392-एफ-जी; 394-डी-ई]

गुलाबदास एंड कंपनी v. अस्स्टेट। सीमा शुल्क कलेक्टर आकाशवाणी

1957 एससी 733-अनुसरण किया गया।

सुरेंद्र प्रसाद खुग्गल बनाम। अध्यक्ष, एम. एम. टी. सी. (1994) सप. 1 एस. सी. सी. 87; सुमेधा नागपाल बनाम दिल्ली राज्य (2000) 9 एस. सी. सी. 745-पर निर्भर था।

हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ।

लिमिटेड (2018) 1 एस. सी. सी. 353: [2017] 10 एससीआर 1006; के. किशन बनाम विजय निर्माण कंपनी प्रा. लिमिटेड (2018)

(I) प्रा. लिमिटेड वी. सेवन ट्रेंट वाटर प्यूरीफिकेशन इंक। (2013) 1 एससीसी 641: [2012] 13 एससीआर 402-संदर्भित

को।

मामला कानून संदर्भ

[2018] 2 एससीआर 829

उस पर भरोसा करें

पैरा

6

[2017] 10 एससीआर 1006

संदर्भित किया गया है

पैरा

12

[2018] 10 एससीआर 959

पैरा

16

संदर्भित किया गया है

[2012] 13 एससीआर 402

संदर्भित किया गया है

पैरा

20

इनक्यूरियम के अनुसार

(2004) 1 एससीसी 540

पैरा

23

(2005) 2 एस. सी. सी. 367

सही कानून नहीं

पैरा

24

इनक्यूरियम के अनुसार

[2009] 12 एससीआर 1

पैरा

24

[2011] 13 एससीआर 156

उस पर भरोसा करें

पैरा

25

[1970] 1 एससीआर 388

उस पर भरोसा करें

पैरा

42

[1996] 8 पूरक। एससीआर 193

उस पर भरोसा करें

पैरा

43

[2016] 1 एससीआर 1025

उस पर भरोसा करें

पैरा

44

(2008) 16 एससीसी 128

उस पर भरोसा करें

पैरा

49

[1975] 2 एससीआर 573

पैरा

52

अप्रयोज्य रखा गया

[2008] 5 एससीआर 522

पैरा

52

अप्रयोज्य रखा गया

(2019) 8 एस. सी. सी. 416

संदर्भित किया गया है

पैरा

66

[2019] 3 एससीआर 535

पैरा

66

संदर्भित किया गया है

पीछा किया।

आकाशवाणी 1957 एससी 733

पैरा

79

(1994) सप. 1 एससीसी 87

उस पर भरोसा करें

पैरा

80

(2000) 9 एस. सी. सी. 745

उस पर भरोसा करें

[2019] 17 एस. सी. आर

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

नागरिक मूल/अपीलीय न्यायनिर्णयः लिखें।

2019 की याचिका (सिविल) संख्या 1074।

[भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत]

के साथ

के. के. वेणुगोपाल, ए. जी., तुषार मेहता, एस. जी., सुश्री पिंकी आनंद, मनिंदर आचार्य, ए. एस. जी., डॉ. ए. एम. सिंघवी, मुकुल रोहतगी, नीरज किशन कौल, नकुल दीवान, रितिन राय, सी. ए. सुंदरम, वरिष्ठ अधिवक्ता। , महेश अग्रवाल, ऋषि अग्रवाल, अंकुर सहगल, सुश्री माधवी खन्ना, सुश्री देविका मोहन, समर कचवाहा, सुश्री चनन परवानी,

सुश्री नमीशा चड्ढा, सुश्री श्रुति अरोड़ा, ई. सी. अग्रवाल, सी. एम. पटेल, सुश्री अवंतिका मनोहर, सुश्री नूरीन सरना, प्रशांत कुमार, जोसेफ

पुक्कट्ट, सुश्री गुंजन माथुर, मृदुल गोधा, मेसर्स। एपी एंड जे चैम्बर्स, अश्विनी कुमार, जय कुमार, सुश्री पीहा वर्मा, सुश्री चिन्मायी

चंद्रा, रजत नायर, कानू अग्रवाल, अंकुर तलवार, सुमित तेतरवाल, सुश्री स्निधा मेहरा, चाकितान पापटा, श्रीमती अनिल कटियार, अरविंद कुमार शर्मा, शैलेश मडियाल, सुधांशु प्रकाश, कार्तिक आनंद, सुश्री मधु स्वेता, सुश्री कनिका टंडन, सुश्री सुभाश्री महापात्रा, सिद्धार्थ आर. अग्रवाल, सुश्री आस्था त्यागी, पीयूष शर्मा, गौहर मिर्जा, सुश्री अमी राणा, निशांत दोशी, मानवेंद्र गुप्ता, एस. एस. श्रॉफ, शैल कुमार द्विवेदी, सिद्धार्थ कृष्ण द्विवेदी, सुश्री विभा द्विवेदी।

सुश्री निधि द्विवेदी, आशीष भान, मोहित रोहतगी, केतन गौर, आयुष मित्रुका, राजेंद्र डांगवाल, सैयद जाफर आलम, अभिषेक गुप्ता, जफर इनायत, सुश्री रोहिणी मूसा, तरुण जौहरी, अंकुर गुप्ता, रवींद्र लोखंडे, सत्यम सिंह, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

आर. एफ. नरीमन, जे.

1. रिट याचिकाओं का यह समूह मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 87 की संवैधानिक वैधता को चुनौती देता है।

(इसके बाद मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2019 (इसके बाद "2019 संशोधन अधिनियम" के रूप में संदर्भित) की धारा 13 द्वारा अंतःस्थापित "मध्यस्थता अधिनियम, 1996" के रूप में संदर्भित किया गया और इसे 30.08.2019 से लागू किया गया। वे मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की धारा 26 के निरसन (23.10.2015 से प्रभावी) को भी चुनौती देना चाहते हैं (जिसे इसके बाद हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v के रूप में संदर्भित किया गया है।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

" 2015 संशोधन अधिनियम ") 2019 के संशोधन अधिनियम की धारा 15 द्वारा। उपरोक्त चुनौती के अलावा, दिवाला और दिवालियापन संहिता, 2016 (जिसे इसके बाद "दिवाला संहिता" के रूप में संदर्भित किया गया है) के विभिन्न प्रावधानों को भी चुनौती दी गई है।

याचिकाकर्ताओं के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है।

2. इन मामलों के निर्धारण के लिए प्रासंगिक तथ्य

2019 की रिट याचिका (सिविल) No.1074 से प्राप्त किया जा सकता है। याचिकाकर्ता संख्या 1, अर्थात हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड, एक बुनियादी ढांचा निर्माण कंपनी है जो सार्वजनिक उपयोगिताओं और सड़कों, पुलों, पनबिजली और परमाणु संयंत्रों, सुरंगों और रेल सुविधाओं जैसी परियोजनाओं के निर्माण के व्यवसाय में शामिल है। याचिकाकर्ता

कंपनी, अन्य बातों के साथ-साथ, इन भवन परियोजनाओं को सरकारी निकायों जैसे कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ("एनएचएआई", यानी रिट याचिका में प्रतिवादी संख्या 5), एनएचपीसी लिमिटेड ("एनएचपीसी", यानी प्रतिवादी संख्या 6), एनटीपीसी लिमिटेड ("एनटीपीसी", यानी प्रतिवादी संख्या 8), इरकॉन इंटरनेशनल लिमिटेड ("इरकॉन", यानी एन. एच. पी. सी.) के लिए एक ठेकेदार के रूप में करती है।

प्रत्यर्थी संख्या 7) और लोक निर्माण विभाग ("पीडब्ल्यूडी")। ऐसी परियोजनाएं याचिकाकर्ता को सार्वजनिक निविदा प्रणाली के माध्यम से आवंटित की जाती हैं। चूंकि सरकारी निकाय ऐसी परियोजनाओं के मालिक और लाभार्थी होते हैं, इसलिए इन निकायों द्वारा लागत में वृद्धि लगभग हमेशा विवादित होती है, जिससे याचिकाकर्ताओं के वैध बकाया की वसूली में भारी देरी होती है। इसके अलावा, इन बकाया राशि की वसूली केवल दीवानी कार्यवाही या मध्यस्थता के माध्यम से की जा सकती है।

दिवाला संहिता क्योंकि वे वैधानिक प्राधिकरण हैं या सरकारी विभाग। भले ही उन्हें चालू कहा जा सकता है

ऋणी-जो मामला नहीं है-जिस क्षण मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 34 और/या धारा 37 के तहत किसी निर्णय को चुनौती दी जाती है, इस न्यायालय के निर्णयों के तहत ऐसा ऋण एक 'विवादित ऋण' बन जाता है, और याचिकाकर्ता कंपनी के कहने पर दिवाला संहिता के तहत शुरू की गई कार्यवाही, जो किसी भी मामले में बनाए रखने योग्य नहीं है, [2019] 17 एस. सी. आर. होगी।

दहलीज पर खारिज कर दिया। इसलिए इन सभी कंपनियों/सरकारी/सरकारी निकायों से याचिकाकर्ताओं को बड़ी राशि देय है।

5. दूसरी ओर, याचिकाकर्ता कंपनी का संचालन जारी रखने के लिए, याचिकाकर्ता पर परिचालन के लिए बड़ी राशि बकाया है।

परियोजनाओं के लिए लोगों, मशीनरी और सामग्री की आपूर्ति के लिए लेनदार। 2019 की रिट याचिका No.1074 में कहा गया है कि याचिकाकर्ता को बड़ी संख्या में परिचालन लेनदारों द्वारा सौ करोड़ से अधिक की राशि के लिए मांग नोटिस जारी किए गए हैं।

6. 2019 की रिट याचिका No.1074 में याचिकाकर्ता संख्या 1 की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता डॉ. अभिषेक मनु सिंघवी ने तर्क दिया है कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता पर UNCITRAL मॉडल कानून (जैसा कि 21 जून 1985 को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कानून पर संयुक्त राष्ट्र आयोग द्वारा अपनाया गया था) (जिसे इसके बाद "UNCITRAL मॉडल कानून" के रूप में संदर्भित किया गया है) पर आधारित है, जिसका अनुच्छेद 36 (2) विशेष रूप से किसी पुरस्कार को अलग करने या निलंबित करने के लिए आवेदनों को संदर्भित करता है, जिसमें दूसरा पक्ष उचित सुरक्षा प्रदान कर सकता है। UNCITRAL के अनुच्छेद 36 के विपरीत

आदर्श कानून, मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 का इस न्यायालय के फैसलों द्वारा यह अर्थ लगाया गया है कि धारा 34 का आवेदन समय के भीतर दायर किए जाने पर 'स्वतः रोक' लगा दी गई है। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, धारा 36 की सरल भाषा से, स्वतः स्थगन का पालन नहीं होता है, और इस न्यायालय के निर्णयों, जिन्होंने इस तरह से अभिनिर्धारित किया है, के लिए इस बड़ी पीठ द्वारा पुनर्विचार की आवश्यकता होगी। किसी भी मामले में, भारत के विधि आयोग की 246 वीं रिपोर्ट, जिसका शीर्षक था, 'मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 में संशोधन' (अगस्त, 2014) (जिसे इसके बाद "246 वीं विधि आयोग रिपोर्ट" के रूप में संदर्भित किया गया है) ने सिफारिश की कि धारा 36 में संशोधन किया जाए, जो वास्तव में 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा किया गया था, ताकि स्वतः-रोक अब अतीत की बातें हो जाएं। हालाँकि, इस तथ्य के बावजूद कि 2015 के संशोधन अधिनियम ने बड़े पैमाने पर परिवर्तन किए

मध्यस्थता अधिनियम, 1996, मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए न्यूनतम न्यायिक हस्तक्षेप, त्वरित निर्धारण और

भारत में तंत्र 'सेवानिवृत्त के नेतृत्व में। न्यायमूर्ति बी. एन. श्रीकृष्णा ने अपनी दिनांकित रिपोर्ट (जिसे इसके बाद "श्रीकृष्णा समिति रिपोर्ट" के रूप में संदर्भित किया गया है) में कहा कि 2015 का संशोधन अधिनियम लंबित अदालती कार्यवाही पर लागू नहीं होना चाहिए जो उसके बाद शुरू हुई हैं। 23.10.2015 (यानी 2015 के संशोधन अधिनियम के लागू होने की तारीख), लेकिन यह केवल उस मामले में लागू होना चाहिए जब मध्यस्थता कार्यवाही स्वयं हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

23.10.2015 के बाद शुरू किया गया, जिसमें अदालती कार्यवाही शामिल होगी

उससे संबंधित। उन्होंने तर्क दिया कि भारत सरकार ने श्रीकृष्णा समिति की रिपोर्ट के अनुसार एक नई धारा 87 को लागू करने के लिए 07.03.2018 पर एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की, जिसके बारे में बताया गया थाः बी. सी. सी. आई. बनाम के मामले का फैसला करने से पहले यह न्यायालय। कोच्चि क्रिकेट प्रा. लिमिटेड (2018) 6 एस. सी. सी. 287 (जो 15.03.2018 पर तय किया गया था)। इस तथ्य के बावजूद कि इस न्यायालय ने उक्त निर्णय में विशेष रूप से राय दी थी कि उपरोक्त प्रावधान 2015 के उद्देश्य के विपरीत होगा।

संशोधन अधिनियम, और इस तथ्य के बावजूद कि निर्णय विशेष रूप से था

कानून और न्याय मंत्रालय और भारत के लिए विद्वान अटॉर्नी जनरल को भेजी गई धारा 87 को अधिनियमित किया गया था, जिसका संदर्भ केवल श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट में दिया गया था, यहां तक कि बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में इस न्यायालय के उपरोक्त फैसले का उल्लेख किए बिना। नतीजतन, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि चूंकि उच्चतम न्यायालय के फैसले के आधार को केवल तभी हटाया जा सकता है जब उक्त फैसले का एक स्पष्ट संदर्भ हो, जाहिर है कि इस न्यायालय के फैसले को इसके आधार को हटाए बिना सीधे पलटने की मांग की गई है। इसके अलावा, धारा 87 न केवल मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के उद्देश्य और 2015 के संशोधन अधिनियम को लागू करने के उद्देश्यों के सामने आती है, बल्कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 35 के विपरीत भी है। उन्होंने कहा है कि यह आश्चर्यजनक है कि एक सिविल कोर्ट में जहां एक पूर्ण-रक्त अपील दायर की जाती है, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश XLI नियम 5

(इसके बाद "सी. पी. सी". के रूप में संदर्भित) लागू होना है, वहाँ नहीं है

स्वतः-एक धन डिक्री पर रोक; जबकि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत एक संक्षिप्त कार्यवाही में, जहां अदालत पुरस्कार पर अपील में नहीं बैठती है-और यदि मध्यस्थ का विचार एक संभावित दृष्टिकोण है, तो यह पारित हो जाता है-एक स्वतः-मध्यस्थ की रोक है।

केवल धारा 34 आवेदन दाखिल करने पर अधिनिर्णय, जो बदले में अंतिम निपटान के लिए वर्षों लेता है।

7. डॉ. सिंघवी ने तब धारा 87 के खिलाफ अपनी बंदूकें प्रशिक्षित करते हुए कहा कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 14,19 (1) (जी), 21 और 300-ए का उल्लंघन है, क्योंकि यह प्राचार्य के उद्देश्य के विपरीत है।

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 स्वयं एक मध्यस्थता पुरस्कार के प्रवर्तन और बाध्यकारी प्रकृति के निहित अधिकार को छीन लेता है और बी. सी. सी. आई. के निर्णय (ऊपर) के आधार को हटाए बिना उक्त निर्णय के अनुसार कार्य करता है, जिससे उक्त धारा अनुचित, अत्यधिक, असमान और साथ ही मनमाना हो जाती है। इसके बाद उन्होंने तर्क दिया कि वास्तव में, 2019 का संशोधन अधिनियम 2015 के संशोधन अधिनियम के लाभकारी प्रभावों को उलट देता है, जिसने मध्यस्थता अधिनियम, 1996, [2019] 17 एस. सी. आर. में निहित मूल शरारत को दूर किया।

वह भी 19 साल से अधिक की अवधि के बाद। स्वतः स्थगन की इस शरारत को वापस लाने के परिणामस्वरूप स्पष्ट मनमानेपन होगा, जिससे प्रावधान संवैधानिक रूप से कमजोर हो जाएगा। उन्होंने तर्क दिया कि श्रीकृष्ण

समिति की रिपोर्ट में दिवाला संहिता के प्रवर्तन को भी ध्यान में नहीं रखा गया। एक ओर, धारा 87 के आवेदन के माध्यम से करोड़ों रुपये के मध्यस्थता पुरस्कारों पर स्वतः ही रोक लग जाएगी, और दूसरी ओर, याचिकाकर्ता द्वारा अपने परिचालन लेनदारों को एक लाख रुपये से अधिक की किसी भी राशि का भुगतान न करने से इसे दिवालिया घोषित किया जा सकता है। इसका बेतुका परिणाम यह है कि याचिकाकर्ता को पुरस्कार के फल से वंचित कर दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप

वित्तीय कठिनाई, जिसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता के खिलाफ दिवाला संहिता के तहत एक पुरस्कार धारक के रूप में देय राशि से कम राशि के लिए आवेदन दायर किए जाते हैं। इसके अलावा, स्वचालित-ठहराव प्रावधान का पूर्वव्यापी पुनरुत्थान उन ऋणदाताओं को पुरस्कार देने की अनुमति देता है जिनके पास है

न्यायालयों के समक्ष मध्यस्थता पुरस्कारों को चुनौती दी गई, और जिन्होंने वास्तव में पुरस्कार धारकों को भुगतान किया है, अब ऐसे पुरस्कार धारकों से उपरोक्त राशि का दावा करने के लिए। इन सभी कारणों से, यह तर्क दिया जाता है कि धारा 87 संवैधानिक रूप से कमजोर है। इसके अलावा, डॉ. सिंघवी के अनुसार, चूंकि सरकार/सरकारी निकायों के साथ लगभग सभी मध्यस्थता खंडों में कहा गया है कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 अपने संशोधनों के साथ लागू होगा, यह 2019 संशोधन अधिनियम को इसके लंबित मध्यस्थता पुरस्कारों पर लागू करेगा, जिसके परिणामस्वरूप पूरी तरह से मनमाने परिणाम होंगे।

8. जहां तक दिवाला संहिता की चुनौती का संबंध है, डॉ. सिंघवी ने हमें दिवाला संहिता की धारा 3 (7) द्वारा परिभाषित 'कॉर्पोरेट व्यक्ति' को पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया, जिसमें दिवाला संहिता के अलावा अन्य सरकारी निकायों को शामिल किया जाए। सरकारी कंपनियाँ (जो पहले से ही शामिल हैं)। यह इस तर्क पर आधारित था कि उद्देश्य को प्राप्त करने की मांग की गई थी

दिवाला संहिता, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कॉर्पोरेट व्यक्ति के रूप में मुकदमा करने वाला व्यक्ति सरकारी कंपनी है या कॉर्पोरेट निकाय है

एक कानून के तहत स्थापित। उन्होंने हमें या तो संहिता की धारा 3 (7) में निहित 'सीमित दायित्व' शब्दों को हटाने के लिए प्रोत्साहित किया, या संहिता की धारा 3 (23) (जी) को धारा 3 (7) में पढ़ने के लिए कहा, और उन निर्णयों पर भरोसा किया जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के 'सकारात्मक' पहलू पर जोर देते हैं, जो ऐसी व्याख्या की अनुमति देते हैं। इसके बाद उन्होंने कहा कि जहां 'वित्तीय स्थिति' (जैसा कि दिवाला संहिता की धारा 5 (9) के तहत परिभाषित किया गया है) वित्तीय जानकारी और बैलेंस शीट को ध्यान में रखना अनिवार्य करती है, वहीं ऐसी वित्तीय स्थिति दिवाला संहिता को लागू करने के चरण में अप्रासंगिक है, और केवल संभावित समाधान आवेदकों के लिए ऐसी स्थिति घोषित करने के चरण में प्रासंगिक हो जाती है, जो स्वयं हिंदूस्तान निर्माण कंपनी को सीमित बनाता है।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

प्रावधान स्पष्ट रूप से मनमाना है। इसके बाद उन्होंने दिवाला संहिता की धारा 6 में एक लेनदार द्वारा समाधान प्रक्रिया की शुरुआत को छोड़ने के साथ-साथ ऐसे कॉर्पोरेट देनदारों की दिवालियापन से बचने के लिए एक कॉर्पोरेट देनदार के देनदारों को भुगतान करने के लिए मजबूर करने के लिए एक तंत्र के अभाव के बारे में तर्क दिया। इसके बाद उन्होंने 'केसस मिसिसस' के सिद्धांत का उल्लेख किया और बताया कि कैसे आधुनिक दृष्टिकोण यह है कि इस तरह के केसस मिसिसस को अदालतों द्वारा प्रदान किया जा सकता है, ताकि दिवाला संहिता के प्रावधानों को स्पष्ट मनमानेपन के दुष्प्रभाव से बचाया जा सके। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि जहां तक उनके मुवक्किल का संबंध है, कानूनी रूप से कोई समान अवसर नहीं है।

प्राधिकरण अपने मुवक्किल जैसे व्यक्तियों के खिलाफ समाधान प्रक्रिया शुरू कर सकता है, लेकिन इसके विपरीत नहीं। इसके बाद उन्होंने एक भावुक याचिका दायर की कि, किसी भी मामले में, इस न्यायालय को अपने पहले के फैसलों का पालन करना चाहिए और इस सिद्धांत को दोहराना चाहिए

एक पुरस्कार के तहत धन-डिक्री का भुगतान, भले ही चुनौती के तहत हो, नियम है-अपवाद होने के कारण बने रहें। इसके अलावा वर्तमान जैसे मामलों में, भले ही जमा धन आदेशों की रोक की शर्त के रूप में किए जाते हैं, निकासी की अनुमति दी जानी चाहिए-बैंक गारंटी जैसी कठिन शर्तों पर नहीं-बल्कि कॉर्पोरेट गारंटी जैसी अन्य शर्तों पर, ताकि ऐसे धन अन्य लेनदारों को भुगतान के लिए उपलब्ध हों, जिसमें परिचालन लेनदार भी शामिल हैं, जो याचिकाकर्ता के खिलाफ दिवाला संहिता लागू करने के लिए स्वतंत्र हैं।

9. डॉ. सिंघवी ने तब तर्क दिया कि उनके मुवक्किल को नीति आयोग के कार्यालय ज्ञापन No.14070/14/2016-पीपीपीएयू का लाभ उठाने के लिए मजबूर किया गया था दिनांक 05.09.2016 (इसके बाद "नीति आयोग योजना" के रूप में संदर्भित) इस तथ्य को देखते हुए कि जिस क्षण मध्यस्थता पुरस्कार उनके मुवक्किल के पक्ष में पारित किए गए थे, उन्हें मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत चुनौती दी गई थी, जिसके परिणामस्वरूप, एक स्वतः स्थगन था। इस प्रकार, उक्त नीति आयोग योजना के तहत, उनके मुवक्किल को इस तरह के पुरस्कारों के तहत देय राशि प्राप्त करने के लिए, "भुगतान राशि" का 75 प्रतिशत प्राप्त करने में सक्षम था, जो वह राशि है जिसके लिए पुरस्कार की घोषणा की गई है।

ब्याज का भुगतान। यह केवल समतुल्य राशि की बैंक गारंटी पर ही किया जा सकता है। हालांकि, ऐसी बैंक गारंटी के अलावा, भुगतान राशि पर प्रति वर्ष 10 प्रतिशत की अतिरिक्त बैंक गारंटी।

इसे भी देना होगा, जिसे फिर सालाना चक्रवृद्धि किया जाता है। उनके अनुसार, इस तथ्य को देखते हुए कि इस तरह की भुगतान राशि का 75 प्रतिशत केवल समतुल्य राशि की बैंक गारंटी पर जारी किया जा सकता है, इसके अलावा कुछ भी मांगना शक्ति का मनमाना प्रयोग होगा, जिसे निरस्त किया जा सकता है। डॉ. सिंघवी ने तर्क दिया कि प्रति वर्ष 10 प्रतिशत की इस अतिरिक्त राशि को अलग किया जा सकता है, इसलिए इसे नीति आयोग योजना को प्रभावित किए बिना रद्द किया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

10. हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी की ओर से भी पेश हुए श्री नीरज किशन कौल ने डॉ.

सिंघवी और उन्होंने 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा प्रस्तुत धारा 87 और 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 के अध्ययन के आधार पर तर्क दिया कि धारा 87 और कुछ नहीं बल्कि धारा 26 का पुनः प्रयोग है और ऐसा होना, इसलिए बी. सी. सी. आई. में इस अदालत के फैसले पर सीधा हमला है। (ऊपर), इसके आधार को हटाए बिना। उन्होंने यह भी कहा कि जब से

दिवाला संहिता द्वारा प्रदान की गई कोई व्यवस्था नहीं होने पर, दिवाला संहिता के प्रावधानों को, जहां तक उनके मुवक्किल का संबंध है, इस हद तक स्पष्ट रूप से मनमाना माना जाएगा।

11. श्री सी. ए. सुंदरम, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता

मेसर्स पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड ने 2019 की आई. ए. संख्या 157742 में 2019 की डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 1074 में इस दलील को दोहराया कि धारा 87, बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में इस अदालत के फैसले के सीधे विपरीत होने के कारण, इसे दरकिनार करने की आवश्यकता है।

उन्होंने यह भी तर्क दिया कि यह पूर्वव्यापी रूप से याचिकाकर्ता के निहित अधिकार को हटा देता है, जैसा कि बी. सी. सी. आई. के फैसले के पैराग्राफ 62 और 63 में परिलक्षित होता है।

(ऊपर)।

12. श्री रितिन राय, मैसर्स की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता

गैमन इंजीनियर्स एंड कॉन्ट्रैक्टर्स प्राइवेट लिमिटेड, अर्थात याचिकाकर्ता डब्ल्यू. पी. में नंबर 1। (ग) 2019 का 1276, भारत संघ के जवाबी-शपथ पत्र के विभिन्न पैराग्राफों को इंगित करता है ताकि यह दिखाया जा सके कि इस प्रस्तुतिकरण का कोई वास्तविक उत्तर नहीं है कि धारा 87 सीधे तौर पर हस्तक्षेप करती है

बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में इस न्यायालय का निर्णय, और यह कि धारा 87 का प्रवर्तन स्पष्ट रूप से मनमाना है। किसी भी मामले में, उन्होंने अनुभाग पर भरोसा किया

6 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधित धारा 36 के अनुप्रयोग को बचाने के लिए सामान्य खंड अधिनियम, 1897। जब दिवाला संहिता के प्रावधानों की बात आई, तो उन्होंने इस न्यायालय के फैसले का उल्लेख किया

यह स्पष्ट करेगा कि दिवाला संहिता के तहत कार्यवाही के लिए सी. पी. सी. प्रकार की प्रक्रिया के आदेश VIII-ए को लागू करने पर कोई रोक नहीं है, ताकि जब उसके मुवक्किल का उप-ठेकेदार अपने मुवक्किल के खिलाफ दिवाला संहिता लागू करे, तो उसके मुवक्किल को इसका मूलधन बनाने में सक्षम होना चाहिए। ऐसी कार्यवाहियों में एक पक्ष को नियोक्ता बनाएँ, ताकि उप-ठेकेदार

फिर इन राशियों को सीधे प्रमुख नियोक्ता से वसूल करें, जिससे उसके मुवक्किल को दिवाला संहिता के चंगुल से मुक्त कर दिया जाए।

हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

13. श्री नकुल दीवान, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता

मैसर्स गंगोत्री एंटरप्राइजेज लिमिटेड की ओर से, यानी डब्ल्यू. पी. में याचिकाकर्ता संख्या 1। (ग) 2019 का सं. 1310, ने UNCITRAL मॉडल कानून को प्रचुर मात्रा में संदर्भित किया और कहा कि UNCITRAL मॉडल कानून के तहत, यदि एक ही देश में एक पुरस्कार पारित किया जाना है, चाहे वह घरेलू हो या अंतर्राष्ट्रीय, तो चेरी में दो काटने उपलब्ध होंगेः में से एक

पुरस्कार को अलग रखने का समय, और एक मान्यता और प्रवर्तन के समय। मध्यस्थता अधिनियम, 1996 ने इस मॉडल का पालन नहीं किया है और इसकी धारा 36 के रूप में कहीं अधिक मजबूत प्रवर्तन व्यवस्था है। मध्यस्थता अधिनियम, 1996 आदेश देता है कि एक बार किसी पुरस्कार को अंतिम कहा जा सकता है, तो इसे सी. पी. सी. द्वारा प्रदान किए गए तरीके से निष्पादित किया जा सकता है।

14. श्री दीवान ने तब कहा कि धारा 87 ने मध्यस्थता पुरस्कारों के प्रवर्तन के संबंध में एक समान अवसर को नष्ट कर दिया।

संशोधित धारा 36 के आवेदन के लिए एक मनमाने ढंग से कट-ऑफ तिथि को फिर से लागू करना। इसके बाद उन्होंने तर्क दिया कि भले ही 2019 के संशोधन अधिनियम की धारा 15 ने 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को हटा दिया है, लेकिन इसने उस आधार को नहीं बदला है जिसके आधार पर बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में निर्णय दिया गया था, क्योंकि मध्यस्थता पुरस्कार के प्रवर्तन का विरोध करने का कोई निहित अधिकार नहीं है, और यह कि मध्यस्थता कार्यवाही और अदालती कार्यवाही

धारा 87 द्वारा ही मान्यता प्राप्त कार्यवाहियों के अलग-अलग समूह हैं।

इसके अलावा, इस कट-ऑफ तिथि के आधार पर पक्षों के वर्गीकरण का मध्यस्थता अधिनियम, 1996 द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के साथ कोई तर्कसंगत संबंध नहीं है। अंत में, उन्होंने आग्रह किया कि भारत संघ द्वारा दायर जवाबी-हलफनामे में, इस अदालत के फैसले का उल्लेख करने के बाद, धारा 87 को पेश करने के लिए वही कारण बताए गए जो श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट में थे, जो बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में इस अदालत के फैसले से पहले था और जिसे ध्यान में नहीं रखा जा सकता था। इसलिए, यह कहना कि इस न्यायालय द्वारा बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में कानून का निपटारा करने के बाद भी

' 'अनिश्चितता' स्वयं यह दर्शाएगी कि धारा 87 में निहित प्रावधान स्पष्ट रूप से मनमाना होगा। इसके बाद उन्होंने दिवाला के कानून पर इयान एफ. फ्लेचर के एक ग्रंथ के आधार पर तर्क दिया कि दिवाला कानून में भुगतान करने से इनकार और भुगतान करने में असमर्थता के बीच अंतर किया गया है। चूँकि स्वतः स्थगन प्रावधान अपने मुवक्किल जैसे व्यक्तियों को ऋण चुकाने में असमर्थ बना देगा, इसलिए उसका मुवक्किल, हालांकि अन्यथा आर्थिक रूप से स्वस्थ होगा।

दिवाला संहिता के तहत दिवालिया घोषित होने के लिए अचानक असुरक्षित हो जाता है।

15. भारत के विद्वान महान्यायवादी श्री के. के. वेणुगोपाल ने 2015 के मध्यस्थता संशोधन [2019] 17 एस. सी. आर. की धारा 26 को निरस्त करने का बचाव किया।

और 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा मध्यस्थता अधिनियम, 1996 में धारा 87 को शामिल करना। उन्होंने तर्क दिया कि बी. सी. सी. आई. के मामले (ऊपर) में, 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 की व्याख्या केवल

पूर्वव्यापी रूप से बी. सी. सी. आई. मामले (ऊपर) में फैसले के आधार को हटा देता है। इसके अलावा, धारा 87 को चुनौती देने में इस आधार पर कोई सार नहीं है कि तारीख 23.10.2015 के रूप में तय की जा रही है, क्योंकि संसद के अनन्य अधिकार क्षेत्र के भीतर होने के कारण कई मामलों में कट-ऑफ तारीखों को बरकरार रखा गया है, और अदालतों को आम तौर पर ऐसी कट-ऑफ तारीख के निर्धारण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि स्पष्ट रूप से मनमाना या मनमाना न हो। भेदभावपूर्ण। उन्होंने इस प्रस्ताव के समर्थन में हमारे कुछ निर्णयों का उल्लेख किया।

16. भारत के विद्वान सॉलिसिटर जनरल श्री तुषार मेहता ने दिवाला संहिता के प्रावधानों को संवैधानिक चुनौती का बचाव करते हुए तर्क दिया कि दिवाला संहिता के अनुच्छेद 32 के तहत दायर एक रिट याचिका

भारत के संविधान को वसूली कार्यवाही में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।

याचिकाकर्ताओं द्वारा। श्री मेहता के अनुसार, डब्ल्यू. पी. में याचिकाकर्ता संख्या 1 का आचरण। (ग) 2019 का 1074 ऐसा है कि रिट याचिका को सीमा पर ही खारिज कर दिया जाना चाहिए। सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, यह तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता ने यह कहकर इस न्यायालय को गुमराह किया है कि इसमें उल्लिखित सरकारी संस्थाओं द्वारा 6070 करोड़ रुपये की राशि का भुगतान किया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसी राशि उन पुरस्कारों के बराबर है जिन पर किसी भी न्यायालय द्वारा रोक नहीं लगाई गई है। उन्होंने भारत संघ के काउंटर-एफिडेविट दिनांक 2 पर संलग्न एक चार्ट का उल्लेख किया और उस पर भरोसा किया, जिसमें उन्हें यह इंगित करने के लिए दर्द हो रहा था कि 2019 की रिट याचिका 1 में याचिकाकर्ता संख्या 1 के पक्ष में प्रत्येक पुरस्कार में अनुबंध मूल्य काम पूरा होने पर भुगतान की गई वास्तविक राशि से बहुत कम था, जिसके अलावा, इन सभी मामलों में अदालतों द्वारा जमा आदेश पारित किए गए हैं, जिनके खिलाफ अपील नहीं की गई है।

उन्होंने आगे तर्क दिया कि हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

कि याचिकाकर्ता संख्या 1 द्वारा तथ्यों और आंकड़ों का घोर दमन किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप रिट याचिका को सीमा पर खारिज कर दिया जाना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता संख्या 1 द्वारा जानबूझकर जो छिपाया गया था वह यह तथ्य था कि प्रतिवादी सार्वजनिक क्षेत्र

उपक्रमों (इसके बाद "सार्वजनिक उपक्रमों" के रूप में संदर्भित) ने मध्यस्थता पुरस्कारों के तहत उनके खिलाफ देय पर्याप्त राशि जमा/भुगतान की है, जो 83.3% के प्रतिशत के हिसाब से है। उन्होंने यह भी बताया कि

जैसा कि आई. आर. सी. ओ. एन. का संबंध है, एक विशेष मध्यस्थता निर्णय के संबंध में, आई. आर. सी. ओ. एन. ने याचिकाकर्ता संख्या 1 पर मध्यस्थ को अवांछित सुविधाएं प्रदान करके मध्यस्थ को प्रभावित करने की कोशिश करने और वास्तव में याचिकाकर्ताओं के वकील द्वारा मध्यस्थ की ओर से आदेशों का मसौदा तैयार करने और अन्यथा मध्यस्थ को अनुचित लाभ प्रदान करने का आरोप लगाया है; ये सभी दिल्ली उच्च न्यायालय में लंबित निर्णय का विषय हैं। जब दिवाला संहिता को चुनौती देने की बात आई, तो उन्होंने तर्क दिया कि कुछ मध्यस्थता पुरस्कारों के तहत देय राशियों को छोड़कर, किसी भी सार्वजनिक उपक्रम का कोई अन्य बकाया नहीं है जो याचिकाकर्ता संख्या 1 को देय है। उन्होंने यह भी बताया कि क्या कोई व्यक्ति एक परिचालन लेनदार है, यह प्रत्येक मामले में तथ्य स्थिति के आधार पर तय किया जाना चाहिए। बहुत ही।

याचिकाकर्ता के इस तर्क का मूल आधार कि दिवाला संहिता असंवैधानिक है क्योंकि यह याचिकाकर्ताओं को अपने देनदारों से धन की वसूली करने का अधिकार नहीं देती है-और यह कि वही दिवाला संहिता देनदार को याचिकाकर्ता संख्या 1 से वसूली करने का अधिकार देती है-त्रुटिपूर्ण है, क्योंकि दिवाला संहिता ऋण की वसूली के लिए एक क़ानून नहीं है। लेकिन यह निगमित व्यक्तियों के पुनर्गठन और निगमित व्यक्तियों की दबावग्रस्त परिसंपत्तियों के समाधान के लिए एक क़ानून है। उनके अनुसार, जिन पांच संस्थाओं के खिलाफ मध्यस्थता निर्णय हैं, उनमें से तीन, अर्थात् एनटीपीसी,

एन. एच. पी. सी. और आई. आर. सी. ओ. एन. सरकारी कंपनियाँ हैं, जो निश्चित रूप से आती हैं। दिवाला संहिता की धारा 3 (7) और 3 (8) के तहत 'निगमित व्यक्ति' और 'निगमित देनदार' की परिभाषा के भीतर। जहाँ तक एन. एच. ए. आई. का संबंध है, उन्होंने इसके उद्देश्यों और कारणों के विवरण का उल्लेख किया।

भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण अधिनियम, 1988 (इसके बाद "एनएचएआई अधिनियम" के रूप में संदर्भित) और उक्त अधिनियम की कुछ धाराओं से यह पता चलता है कि एनएचएआई एक सांविधिक निकाय है जो राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के विस्तारित अंग के रूप में कार्य करता है।

केंद्र सरकार, और जिसे राष्ट्रीय राजमार्गों को बिछाने का संप्रभु कार्य करना है। जाहिर है, दिवाला संहिता का उपयोग ऐसे सांविधिक निकाय के खिलाफ नहीं किया जा सकता है, क्योंकि कोई भी समाधान पेशेवर या निजी व्यक्ति ऐसे निकाय के प्रबंधन को नहीं संभाल सकता है, क्योंकि यह संप्रभु कार्य करता है, और न ही ऐसे निकाय को दिवाला संहिता के तहत दिवालिया होने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। उन्होंने [2019] 17 एस. सी. आर. का भी उल्लेख किया।

दिवाला संहिता की धारा 3 (7) और 3 (23) में निहित परिभाषाएँ,

किशन बनाम। विजय निर्माण कंपनी प्रा. लिमिटेड (2018) 17 एस. सी. सी. 662 ने यह स्पष्ट किया कि मध्यस्थता पुरस्कार जो इसके तहत निर्णय के लिए लंबित हैं। धारा 34 से पता चलता है कि ऐसे मामलों में एक पूर्व-विद्यमान विवाद मौजूद है, और इसलिए किसी भी मामले में दिवाला संहिता में निहित कानून की मजबूत शाखा के बाहर होगा।

17. अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल सुश्री पिंकी आनंद ने विद्वान अटॉर्नी जनरल और सॉलिसिटर जनरल दोनों की दलीलों का समर्थन किया। उन्होंने आगे तर्क दिया, भारत संघ की ओर से दायर जवाबी-शपथ पत्र के प्रचुर पढ़ने के आधार पर, कि केवल एक विशेष कट-ऑफ तिथि का पालन करके 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों में कोई पैठ नहीं बनाई गई है। किसी भी मामले में, संसद का एकमात्र विशेषाधिकार होने के नाते, इस तरह की तारीख तय करने में अदालतों द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह नीतिगत मामलों से संबंधित है। उन्होंने अपनी दलीलों को पुष्ट करने के लिए इस न्यायालय के कुछ फैसलों का भी हवाला दिया।

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 की व्याख्या

18. शुरुआत में, मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 और इसकी व्याख्या करने वाले निर्णयों का विज्ञापन करना महत्वपूर्ण है। धारा 36 (2015 के संशोधन अधिनियम से पहले) में निम्नानुसार कहा गया हैः

" 36. प्रवर्तन। - आवेदन करने का समय कहाँ है

धारा 34 के तहत मध्यस्थता पुरस्कार की अवधि समाप्त हो गई है, या ऐसा आवेदन किए जाने के बाद, इसे अस्वीकार कर दिया गया है, पुरस्कार को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के तहत उसी तरह से लागू किया जाएगा जैसे कि यह अदालत की डिक्री थी। ”

19. मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के प्रावधानों को समझने के लिए UNCITRAL मॉडल कानून महत्वपूर्ण है क्योंकि उक्त अधिनियम स्पष्ट रूप से इस पर आधारित है। मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की प्रस्तावना में विशेष रूप से निम्नलिखित कहा गया हैः

" प्रस्तावना। - जहाँ पर संयुक्त राष्ट्र आयोग

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कानून (UNCITRAL) ने अपनाया है

1985 में अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता पर UNCITRAL मॉडल कानून; और हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

जहाँ संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने सिफारिश की गई है कि सभी देश मध्यस्थता प्रक्रियाओं के कानून की एकरूपता की वांछनीयता और अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता अभ्यास की विशिष्ट आवश्यकताओं को देखते हुए उक्त मॉडल कानून पर उचित विचार करें।

1980 में सुलह नियम और जहाँ संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने

उन मामलों में उक्त नियमों के उपयोग की सिफारिश की जाती है जहां अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक संबंधों के संदर्भ में कोई विवाद उत्पन्न होता है और पक्ष उस विवाद का सौहार्दपूर्ण समाधान चाहते हैं।

सुलह के लिए;

और जहाँ उक्त आदर्श कानून और नियम बनाते हैं

उत्पन्न होने वाले विवादों के निष्पक्ष और कुशल समाधान के लिए एक एकीकृत कानूनी ढांचे की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान

अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक संबंधों में;

और जहाँ इस संबंध में कानून बनाना समीचीन है

उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए मध्यस्थता और सुलह

मॉडल कानून और नियम "।

20. वास्तव में, क्लोरो कंट्रोल्स (आई) लिमिटेड बनाम में निर्णय। सेवन ट्रेंट वाटर प्यूरिफिकेशन इंक. (2013) 1 एस. सी. सी. 641 इसके पैराग्राफ 93 में जितना है, जो नीचे दिया गया है:

" 93. जैसा कि ऊपर देखा गया है, विधायी आशय और इसका सार

1996 अधिनियम घरेलू और साथ ही अंतर्राष्ट्रीय लाने के लिए था

UNCITRAL मॉडल नियमों, न्यूयॉर्क कन्वेंशन और जिनेवा कन्वेंशन के अनुरूप वाणिज्यिक मध्यस्थता। न्यूयॉर्क कन्वेंशन भौतिक रूप से विधायिका के समक्ष था और इसके विचार के लिए उपलब्ध है जब इसने 1996 का अधिनियम अधिनियमित किया। कन्वेंशन के अनुच्छेद 2 में प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक संविदाकारी राज्य एक समझौते को मान्यता देगा और मध्यस्थता के समक्ष उन सभी या किसी भी मतभेद को प्रस्तुत करेगा जो उत्पन्न हुए हैं या जो एक परिभाषित कानूनी संबंध के संबंध में उनके बीच उत्पन्न हो सकते हैं, चाहे वह संविदात्मक हो या न हो जो किसी ऐसे विषय से संबंधित हो जो समझौता करने में सक्षम हो।

मध्यस्थता। एक बार समझौता हो जाता है और अदालत को जब्त कर लिया जाता है

ऐसे विषय-वस्तु के संबंध में किसी कार्रवाई का, फिर किसी एक पक्ष के अनुरोध पर, यह पक्षकारों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करेगा। जब तक समझौता अमान्य, निष्क्रिय या अक्षम न हो

"[2019] 17 एस. सी. आर.

21. जहाँ तक यू. एन. सी. आई. टी. आर. ए. एल. मॉडल कानून का संबंध है, उसका अनुच्छेद 36 (2) महत्वपूर्ण है, जिसमें निम्नानुसार कहा गया हैः

" अनुच्छेद 36। मान्यता या प्रवर्तन से इनकार करने के लिए आधार XXX XXX XXX

(2) यदि पैराग्राफ (1) (ए) (वी) में निर्दिष्ट किसी अदालत में किसी पुरस्कार को रद्द करने या निलंबित करने के लिए आवेदन किया गया है। इस अनुच्छेद में, वह न्यायालय जहां मान्यता या प्रवर्तन की मांग की गई है, यदि वह इसे उचित समझता है, तो अपने निर्णय को स्थगित कर सकता है और मान्यता का दावा करने वाले पक्ष के आवेदन पर भी या

पुरस्कार का प्रवर्तन, दूसरे पक्ष को प्रदान करने का आदेश दें

उचित सुरक्षा "।

22. श्री दीवान ने तर्क दिया है कि UNCITRAL मॉडल के तहत

कानून, अनुच्छेद 34 और 35 में चेरी में दो काटने का प्रावधान हैः (i) उन मामलों में जिनमें किसी पुरस्कार को अलग रखने की मांग की जाती है, और (ii) उसके बाद जब अलग नहीं किया जाता है, तो उसी देश में मान्यता और लागू करने की मांग की जाती है जिसमें इसे बनाया गया है। उनका यह कहना सही है कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 चेरी में दो काटने का पालन नहीं करती है।

सिद्धांत, इस कारण से कि जब भारत में दिया गया कोई निर्णय अंतिम और बाध्यकारी हो जाता है, तो उसे तुरंत सी. पी. सी. के तहत लागू किया जाएगा, और उसी तरह से जैसे कि यह अदालत की डिक्री थी, जब मान्यता और प्रवर्तन की बात आती है तो उसी आधार का कोई सहारा नहीं होता है। वास्तव में, धारा 36 के लिए कारण केवल यह स्पष्ट करने के लिए है कि जब कोई मध्यस्थ पुरस्कार चुनौती के लिए अतिसंवेदनशील नहीं है, या तो क्योंकि इसे अलग करने के लिए आवेदन करने का समय समाप्त हो गया है, या ऐसा आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है, तो पुरस्कार, अंतिम और बाध्यकारी होने के कारण, सी. पी. सी. के तहत लागू किया जाएगा जैसे कि यह अदालत की डिक्री हो। यह तब स्पष्ट हो जाता है जब मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 और 35 को एक साथ पढ़ा जाता है। मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 35 इस प्रकार हैः

" 35. मध्यस्थता पुरस्कारों को अंतिम रूप देना। - इस भाग के अधीन एक मध्यस्थ पुरस्कार अंतिम होगा और उनके अधीन दावा करने वाले पक्षों और व्यक्तियों के लिए बाध्यकारी होगा।

23. हालांकि, नेशनल एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड में।

(नाल्को) v. प्रेस्टील एंड फैब्रिकेशन (पी) लिमिटेड और ए. एन. आर. 2004 1 एस. सी. सी. 540, इस न्यायालय ने निर्णय दियाः

" 10 ..... एक समय पर, पुरस्कार को एक धन डिक्री के रूप में मानते हुए, हम पक्ष को नीचे दी गई अदालत में सम्मानित राशि जमा करने का निर्देश देने के लिए इच्छुक थे ताकि आवेदक हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

इसे वापस लें, ऐसे नियमों और शर्तों पर जो उक्त अदालत इसे एक अंतरिम उपाय के रूप में करने की अनुमति दे सकती है। लेकिन फिर हमने 1996 के अधिनियम की धारा 34 की अनिवार्य भाषा से देखा कि एक पुरस्कार, जब उसमें निर्धारित समय के भीतर धारा 34 के तहत चुनौती दी जाती है, तो वह अप्रवर्तनीय हो जाता है। उक्त पुरस्कार के संबंध में कोई भी अंतर्वर्ती आदेश पारित करने के लिए अदालत के पास कोई विवेकाधिकार नहीं बचा है, सिवाय आवेदक द्वारा किए गए दावे की शुद्धता पर निर्णय लेने के। इसलिए, वह विधायी इरादा होने के कारण, उसके विपरीत हमारी ओर से कोई भी निर्देश भी अस्वीकार्य हो जाता है। इस मामले के तथ्यों पर, ऐसी कोई असाधारण स्थिति नहीं है जो हमें इस तरह की अनदेखी करने के लिए मजबूर करे

वैधानिक प्रावधान, और अनुच्छेद 142 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने के लिए, हम खुद को ऐसा कोई भी आदेश पारित करने से रोकते हैं, जैसा कि अनुरोध किया गया है।

आवेदक के लिए।

11. हालाँकि, हम देखते हैं कि पुरस्कार के निष्पादन का यह स्वतः निलंबन, जिस क्षण उक्त पुरस्कार को चुनौती देने वाला एक आवेदन अधिनियम की धारा 34 के तहत दायर किया जाता है, अदालत में पक्षकारों को शर्तों पर रखने के लिए कोई विवेकाधिकार नहीं छोड़ता है, हमारी राय में,

वैकल्पिक विवाद समाधान के उद्देश्य को पराजित करता है प्रणाली जिससे मध्यस्थता संबंधित है। हम पाते हैं कि एक

ऐसे मामलों में उपयुक्त अंतरिम आदेश पारित करने के लिए दीवानी अदालत को सशक्त बनाने के प्रस्ताव के साथ धारा 34 में संशोधन करने के लिए संबंधित मंत्रालय द्वारा संसद को की गई सिफारिश। इस तरह के संशोधन की तात्कालिकता को देखते हुए, हम ईमानदारी से उम्मीद करते हैं कि कानून में आवश्यक बदलाव लाने के लिए संबंधित अधिकारियों द्वारा जल्द से जल्द आवश्यक कदम उठाए जाएंगे।

24. जब यह न्यायालय मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की "34 की अनिवार्य भाषा" की बात करता है, तो स्पष्ट रूप से मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 की आयु का क्या अर्थ है, जैसा कि जोनल बिल्डिंग्स कंस्ट्रक्शन कॉर्पोरेशन लिमिटेड v. लॉयड्स

लेशन इंडिया लिमिटेड (2005) 2 एस. सी. सी. 367 (पैराग्राफ 6 में)। फिज़ा में लोपर्स और इंटर-ट्रेड प्रा. लि. लिमिटेड वी. एएमसीआई (इंडिया) प्रा. लि.

एन. आर. (2009) 17 एस. सी. सी. 796, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

" 20. धारा 36 में प्रावधान है कि एक पुरस्कार को उसी तरीके से लागू किया जाएगा जैसे कि यह अदालत की डिक्री हो, लेकिन केवल आवेदन करने के लिए समय समाप्त होने पर धारा 34 के तहत मध्यस्थता पुरस्कार, या ऐसा आवेदन अस्वीकार किए जाने के बाद ही किया गया है। इस प्रकार, अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन के निपटारे तक, एक निहित [2019] 17 एस. सी. आर. है।

मध्यस्थता पुरस्कार के प्रवर्तन का निषेध। धारा 34 के तहत एक आवेदन की फाइलिंग और लंबितता, वास्तव में, पुरस्कार के प्रवर्तन पर रोक के रूप में काम करती है।

25. यह कहना कि धारा 34 के तहत चुनौती दिए जाने पर कोई पुरस्कार केवल धारा 36 की भाषा के कारण इस तरह की चुनौती दिए जाने के कारण अप्रवर्तनीय हो जाता है, स्पष्ट रूप से गलत है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, धारा 36 को एक अलग उद्देश्य के लिए अधिनियमित किया गया था। जब धारा 35 के साथ पढ़ा जाता है, तो वह सब धारा 36 में कहा गया है कि अंतिम निर्णय का प्रवर्तन सी. पी. सी. के तहत होगा, और उसी तरह से जैसे कि यह अदालत की डिक्री थी। वास्तव में, लीला होटल्स लिमिटेड बनाम हाउसिंग एंड अर्बन डेवलपमेंट कॉरपोरेशन लिमिटेड (2012) 1 एस. सी. सी. 302 में तीन न्यायाधीशों की पीठ ने धारा 36 को इस प्रकार पढ़ा हैः

न्यायालय का आदेश। उक्त भाषा विद्वान मध्यस्थ के निर्णय के तरीके के बारे में संदेह के लिए कोई जगह नहीं छोड़ती है स्वीकार किया जाना था। "

26. धारा 36 को कुछ नकारात्मक निष्कर्ष के रूप में पढ़ना, अर्थात्, जहां धारा 34 के तहत आवेदन करने का समय है

समाप्त नहीं हुआ है और इसलिए, समय के भीतर इस तरह का आवेदन किए जाने पर, एक स्वचालित-रोक लग जाती है, धारा 36 में कुछ पढ़ना है जो बिल्कुल भी नहीं है। इसके अलावा, यह निर्माण धारा 36 के शेष भाग पर विचार करने को छोड़ देता है, जो धारा 34 के तहत खारिज किए गए आवेदनों से संबंधित है, जिससे एक पुरस्कार अंतिम और बाध्यकारी हो जाता है (जब मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 35 के साथ पढ़ा जाता है) जो तब सी. पी. सी. के तहत प्रवर्तनीय हो जाता है, पुरस्कार को इस उद्देश्य के लिए एक डिक्री के रूप में माना जाता है।

27. इसे मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 9 की भाषा से भी समर्थन मिलता है, जो विशेष रूप से एक पक्ष को आवेदन करने में सक्षम बनाती है। राहत के लिए किसी न्यायालय को ". मध्यस्थता पुरस्कार देने के बाद लेकिन धारा 36 के अनुसार इसे लागू करने से पहले।" नाल्को (ऊपर) और फिज़ा डेवलपर्स और इंट्रा-ट्रेड प्राइवेट लिमिटेड में निर्णय। लिमिटेड (ऊपर) इस वैधानिक स्थिति की अनदेखी करता है। धारा 9 के इन शब्दों में 2015 या 2019 के संशोधन अधिनियमों के कारण कोई बदलाव नहीं हुआ है।

28. मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 9 की व्याख्या करते हुए, डर्क इंडिया प्राइवेट लिमिटेड में बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ। लिमिटेड वी. महाराष्ट्र स्टेट पावर जेनरेशन कंपनी लिमिटेड 2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन बॉम 481 ने कहा किः

" 13 ..... धारा 9 का दूसरा पहलू मांगे गए आदेशों और मध्यस्थता कार्यवाही के बीच निकट संबंध है। जब मध्यस्थता कार्यवाही से पहले या उसके दौरान संरक्षण का एक अंतरिम उपाय मांगा जाता है, तो ऐसा उपाय मध्यस्थता कार्यवाही के फलने-फूलने में सहायता के लिए एक कदम है। जब मध्यस्थता पुरस्कार की मांग की जाती है, लेकिन इसे लागू करने से पहले, संरक्षण के उपाय का उद्देश्य कार्यवाही के फल की रक्षा करना है जब तक कि

अंततः पुरस्कार का प्रवर्तन। यहाँ फिर से सुरक्षा का उपाय प्रवर्तन की सहायता के लिए एक कदम है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि पुरस्कार के प्रवर्तन के परिणामस्वरूप एक वास्तविक दावा हो और यह कि पुरस्कार को ऐसे लेनदेन द्वारा भ्रामक नहीं बनाया जाता है जो पुरस्कार के विषय को प्रवर्तन के दायरे से बाहर कर देगा।

29. यह विधायी इरादा होने के कारण, नाल्को (ऊपर) में यह अवलोकन कि एक बार धारा 34 का आवेदन दायर होने के बाद, "कोई नहीं है उक्त पुरस्कार के संबंध में कोई भी अंतर्वर्ती आदेश पारित करने के लिए न्यायालय के पास विवेकाधिकार छोड़ दिया गया है। "यह मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 9 के प्रारंभिक शब्दों के सामने आता है, जो ऊपर निकाले गए हैं।

30. इस प्रकार, नाल्को (ऊपर), और फिज़ा डेवलपर्स और इंट्रा-ट्रेड प्राइवेट लिमिटेड में निर्णयों का तर्क। लिमिटेड (ऊपर) प्रति

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 9,35 और धारा 36 के दूसरे भाग पर ध्यान न देना, हमें स्वयं की प्रशंसा नहीं करता है और कानून को सही ढंग से नहीं बताता है। तथ्य यह है कि नाल्को (सुप्रा)

1 1 नाल्को (उपर्युक्त) में, यह न्यायालय दो प्रश्नों से संबंधित था-दूसरा प्रश्न यह था कि क्या उपयुक्त न्यायालय, चुनौती देने के उद्देश्य से या

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 2 (ई) के तहत किसी पुरस्कार में संशोधन की मांग करने वाला सर्वोच्च न्यायालय या मूल अधिकार क्षेत्र का प्रमुख दीवानी न्यायालय था। इस न्यायालय ने एम. पी. बनाम राज्य को अलग करते हुए अभिनिर्धारित किया। सेठ एंड स्केलेटन (पी) लिमिटेड (1972) 1 एस. सी. सी. 702 और गुरु नानक फाउंडेशन बनाम। रतन सिंह एंड संस। (1981) 4 एस. सी. सी. 634, कि जिस न्यायालय के पास पुरस्कार को संशोधित करने और/या अलग करने का अधिकार क्षेत्र था, वह सर्वोच्च न्यायालय नहीं था। इस बिंदु पर, एन. ए. एल. सी. ओ. (उपरोक्त) के बाद कई निर्णय लिए गए हैं और यह अभी भी एक अच्छा कानून बना हुआ है। इसके अलावा, फिज़ा डेवलपर्स और इंट्रा-ट्रेड प्राइवेट में निर्णय का अनुपात। धारा 34 की कार्यवाहियों में आवश्यक मुद्दों और अभिवचनों और सबूतों को तैयार करने से संबंधित मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 34 के निर्माण पर लिमिटेड (उपर्युक्त) वर्तमान में अछूता है।

निर्णय।

9] 17 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम लिमिटेड बनाम। लॉयड्स इंसुलेशन इंडिया लिमिटेड (ऊपर) हमें आगे नहीं ले जाता है, जैसा कि नेशनल बिल्डिंग्स कंस्ट्रक्शन कॉर्पोरेशन लिमिटेड (ऊपर) में है।

एन. ए. एल. सी. ओ. (ऊपर) के बाद, एक प्रति इनक्यूरियम निर्णय भी कानून को सही ढंग से नहीं बताता है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि इन निर्णयों द्वारा निर्धारित किसी पुरस्कार का स्वतः स्थगन गलत है। परिणामी स्थिति यह है कि धारा 36-भले ही मूल रूप से अधिनियमित की गई हो-का उद्देश्य UNCITRAL मॉडल कानून के अनुच्छेद 36 (2) को समाप्त करना नहीं है, बल्कि वास्तव में भारत में दिए गए पुरस्कारों के संदर्भ में चेरी सिद्धांत में दो काटने को दूर करना है, और यह तथ्य कि एक अंतिम अधिनियम को लागू करना है।

पुरस्कार, जब धारा 35 के साथ पढ़ा जाता है, तो सी. पी. सी. के तहत होना चाहिए, पुरस्कार को अदालत की डिक्री के रूप में माना जाता है।

31. किसी भी स्थिति में, मामले के इस पहलू पर, बी. सी. सी. आई. के निर्णय (ऊपर) ने उसके पैराग्राफ 25 में, धारा 36 पर 246 वें विधि आयोग की रिपोर्ट को निम्नानुसार संदर्भित कियाः

" 25. इस बिंदु पर, 246 वें विधि आयोग की रिपोर्ट का उल्लेख करना शिक्षाप्रद है जिसके कारण संशोधन अधिनियम बना। अगस्त 2014 में सरकार को सौंपी गई इस रिपोर्ट में यह बताया गया था कि वह धारा को बदलने का प्रस्ताव क्यों कर रही है

36 1996 के अधिनियम काः

" के प्रवर्तन का स्वचालित स्तर चुनौती का पुरस्कार प्रदान करना

" 43. अधिनियम की धारा 36 यह स्पष्ट करती है कि एक मध्यस्थ पुरस्कार धारा 34 के तहत याचिका दायर करने का समय समाप्त होने या धारा 34 याचिका खारिज होने के बाद ही डिक्री के रूप में प्रवर्तनीय हो जाता है। दूसरे शब्दों में, धारा 34 याचिका की लंबितता एक मध्यस्थ पुरस्कार को अप्रवर्तनीय बनाती है। उच्चतम न्यायालय ने राष्ट्रीय एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड बनाम. प्रीस्टील

& फैब्रिकेशन (पी) लिमिटेड [नेशनल एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड बनाम। प्रेस्टील एंड फैब्रिकेशंस (पी) लिमिटेड, (2004) 1 एस. सी. सी. 540] ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 36 के आधार पर, हारने वाले पक्ष को न्यायालय में पुरस्कार के किसी भी हिस्से को जमा करने का निर्देश देने वाला आदेश पारित करना अनुज्ञेय नहीं था। जबकि यह निर्णय धारा 42 के तहत ऐसा आदेश पारित करने की सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियों के संबंध में था, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने एफकॉन्स इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड बनाम. पोर्ट ऑफ मुंबई [एफकॉन्स इन्फ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड बनाम। मुंबई बंदरगाह, (2014) 1 अरब एल. आर. 512 (बम) ने इसी सिद्धांत को शक्तियों पर लागू किया।

अधिनियम की धारा 9 के तहत भी।

एक हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड का प्रवेश v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

इसलिए, धारा 34 याचिका, विजेता पक्ष/पुरस्कार लेनदार के लिए प्रक्रिया को वस्तुतः पंगु बना देती है।

44. सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय एल्यूमीनियम [राष्ट्रीय एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड v. प्रेस्टील एंड फैब्रिकेशन (पी) लिमिटेड, (2004) 1 एस. सी. सी. 540] ने निम्नलिखित शब्दों में वर्तमान स्थिति की आलोचना की हैः (एस. सी. सी पी. 546, पैरा 11)

'11 . हालाँकि, हम देखते हैं कि पुरस्कार के निष्पादन का यह स्वतः निलंबन, जिस क्षण उक्त पुरस्कार को चुनौती देने वाला एक आवेदन अधिनियम की धारा 34 के तहत दायर किया जाता है, अदालत में पक्षकारों को शर्तों पर रखने का कोई विवेकाधिकार नहीं छोड़ता है, हमारी राय में,

वैकल्पिक विवाद समाधान के उद्देश्य को पराजित करता है

प्रणाली जिससे मध्यस्थता संबंधित है। हम यह भी पाते हैं कि संबंधित मंत्रालय द्वारा संसद को ऐसे मामलों में उपयुक्त अंतरिम आदेश पारित करने के लिए दीवानी अदालत को सशक्त बनाने के प्रस्ताव के साथ धारा 34 में संशोधन करने की सिफारिश की गई है। इस तरह के संशोधन की तात्कालिकता को देखते हुए, हम ईमानदारी से उम्मीद करते हैं कि कानून में आवश्यक बदलाव लाने के लिए संबंधित अधिकारियों द्वारा जल्द से जल्द आवश्यक कदम उठाए जाएंगे। ”

45. इस शरारत को सुधारने के लिए, आयोग द्वारा अधिनियम की धारा 36 में कुछ संशोधनों का सुझाव दिया गया है, जिसमें प्रावधान है कि केवल धारा 34 के तहत आवेदन करने पर पुरस्कार अप्रवर्तनीय नहीं हो जाएगा। इसके बाद उसने आगे कहाः

" 62 ..... चूँकि यह स्पष्ट है कि एक डिक्री का निष्पादन संबंधित है

एक निर्णय में-निष्पादन का विरोध करने के लिए ऋणी, धारा 36, प्रतिस्थापित के रूप में, उस तारीख को लंबित धारा 34 आवेदनों पर भी लागू होगी। संशोधन अधिनियम के प्रारंभ का "।

इसके बाद न्यायालय ने नाल्को (ऊपर) में इस न्यायालय के फैसले पर इस प्रकार टिप्पणी कीः "
67. 2004 में, राष्ट्रीय एल्यूमीनियम कंपनी में इस न्यायालय का निर्णय [राष्ट्रीय एल्यूमीनियम कंपनी लिमिटेड बनाम। प्रेस्टील एंड फैब्रिकेशंस (पी) लिमिटेड, (2004) 1 एस. सी. सी. 540] ने सिफारिश की थी कि धारा 36 को प्रतिस्थापित किया जाए, क्योंकि यह विकल्प के उद्देश्य को ही विफल कर देता है।

विवाद समाधान प्रणाली, और कि धारा में संशोधन किया जाना चाहिए

कानून में आवश्यक परिवर्तन लाने के लिए जल्द से जल्द।

एस. सी. आर. होगा।

स्पष्ट हो कि व्यावहारिक पहलू और प्रकृति को देखते हुए वर्तमान में शामिल अधिकार, और सरासर अन्याय

धारा 36, जैसा कि संशोधित किया गया है, धारा 34 आवेदनों पर लागू होनी चाहिए। संशोधन अधिनियम के प्रारंभ से पहले भी दायर किया गया

उपरोक्त कारण "। "

"

(जोर दिया गया)

32. 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधित धारा 36, अब

इस प्रकार हैः

" 36. प्रवर्तन (1) जहाँ एक बनाने के लिए समय

धारा 34 के तहत मध्यस्थता पुरस्कार को अलग करने के लिए आवेदन है

तब, उप-धारा (2) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, ऐसी अवधि समाप्त हो गई

पुरस्कार के प्रावधानों के अनुसार लागू किया जाएगा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5), उसी तरीके से

मानो यह अदालत का आदेश हो।

(2) जहाँ मध्यस्थता पुरस्कार को अलग रखने के लिए एक आवेदन किया गया है

धारा 34 के तहत, इस तरह के आवेदन को दाखिल करने से

ऐसी शर्तें जो उसे उचित लगें, संचालन पर रोक लगा दें। लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए इस तरह के पुरस्कार काः

बशर्ते कि न्यायालय आवेदन पर विचार करते समय के भुगतान के लिए एक मध्यस्थ पुरस्कार के मामले में रोक के अनुदान के लिए

धन, एक के ठहराव के अनुदान के लिए प्रावधानों का उचित सम्मान है

सिविल संहिता के प्रावधानों के तहत धन आदेश

प्रक्रिया, 1908 (1908 का 5) "। इस तथ्य को देखते हुए कि हमने घोषणा की है कि निर्णयों में

सी. ओ. (ऊपर), राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम (ऊपर) और फिज़ा डेवलपर्स (ऊपर) ने हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

गलत तरीके से, यह भी स्पष्ट है कि संशोधित धारा 36, प्रकृति में स्पष्टीकरणात्मक होने के कारण, केवल इस स्थिति को दोहराती है कि असंशोधित धारा 36 सी. पी. सी. के प्रावधानों के तहत धन डिक्री पर रोक लगाने के लिए कानून के रास्ते में नहीं आती है।

2019 तक बी. सी. सी. आई. के फैसले के आधार को हटाना

संशोधन अधिनियम

33. अब यह निर्धारित किया जाना है कि क्या 2019

संशोधन अधिनियम बी. सी. सी. आई. के निर्णय (ऊपर) के आधार को हटा देता है यह न्यायालय।

34. इस उद्देश्य के लिए, 2019 के संशोधन अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों को निर्धारित करना आवश्यक है। 2019 के संशोधन अधिनियम की धारा 13 द्वारा प्रस्तुत धारा 87 इस प्रकार हैः

" 87. जब तक पक्ष अन्यथा सहमत नहीं होते हैं, मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम द्वारा इस अधिनियम में किए गए संशोधन,

2015 करेंगे। (
(a) लागू नहीं होता है

(i) मध्यस्थता कार्यवाही शुरू होने से पहले

मध्यस्थता और सुलह की शुरुआत
(संशोधन) अधिनियम, 2015;

((ii) इस प्रकार से या उसके संबंध में उत्पन्न होने वाली अदालती कार्यवाही।

इस बात की परवाह किए बिना कि इस तरह की अदालती कार्यवाही से पहले या बाद में शुरू की जाती है, मध्यस्थता कार्यवाही

मध्यस्थता और सुलह की शुरुआत

(संशोधन) अधिनियम, 2015;

(ख) केवल मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 के प्रारंभ पर या उसके बाद शुरू हुई मध्यस्थता कार्यवाही और उससे या उसके संबंध में उत्पन्न होने वाली अदालती कार्यवाही पर लागू होता है।

ऐसी मध्यस्थता कार्यवाही के लिए "।

उसी संशोधन अधिनियम की धारा 15 द्वारा, 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को निम्नानुसार हटा दिया गया थाः

" 15. मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की धारा 26 को हटा दिया जाएगा और माना जाएगा कि

23 अक्टूबर, 2015 से प्रभाव से हटा दिया गया। 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 इस प्रकार हैः

" 26. इस अधिनियम में निहित कुछ भी इस अधिनियम के प्रारंभ से पहले मूल अधिनियम की धारा 21 के प्रावधानों के अनुसार शुरू की गई मध्यस्थता कार्यवाही पर लागू नहीं होगा, जब तक कि पक्ष अन्यथा सहमत न हों, लेकिन यह अधिनियम उस तारीख को या उसके बाद शुरू हुई मध्यस्थता कार्यवाही के संबंध में लागू होगा।

इस अधिनियम के प्रारंभ से "।

35. बी. सी. सी. आई. (ऊपर) में इस अदालत के फैसले में धारा 26 की सही व्याख्या के रूप में महत्वपूर्ण प्रश्न से निपटने का अवसर था।

2015 का संशोधन अधिनियम। इस न्यायालय ने अनुच्छेद 28 में 246 वें विधि आयोग की रिपोर्ट में प्रस्तावित धारा 85-ए में निहित अस्थायी प्रावधान का उल्लेख किया और उसके बाद अनुच्छेद 29 से 31 में सदन में बहस का उल्लेख किया। पैराग्राफ 32 में,

इस न्यायालय ने धारा 26 और धारा 85-ए के बीच के मतभेदों को प्रस्तावित रूप में संदर्भित किया, और फिर अभिनिर्धारित कियाः

" 33. उपरोक्त से जो देखा जा सकता है वह यह है कि धारा 26 ने कार्यवाही को मध्यस्थता और अदालती कार्यवाही में विभाजित करते हुए धारा 85-ए से कुछ हद तक अलग कर दिया है।

विधि आयोग द्वारा प्रस्तावित "।

36. तब धारा 26 को कार्यवाही को विभाजित करने के लिए कहा गया था

कार्यवाही के दो सेटों में स्पष्टता की एक बड़ी डिग्री के साथ-स्वयं मध्यस्थता कार्यवाही, और उसके संबंध में अदालती कार्यवाही।

निर्णय के अनुच्छेद 39 में इसका उल्लेख किया गया है और निम्नानुसार कहा गया हैः

" 39. इसलिए धारा 26, कार्यवाहियों को, जैसा कि ऊपर कहा गया है, बहुत स्पष्टता के साथ, दो समूहों में विभाजित करती है -

मध्यस्थता कार्यवाही स्वयं, और न्यायालय उसके संबंध में कार्यवाही। धारा 26 के पहले भाग को नकारात्मक रूप में रखने का कारण केवल यह कहना है कि

संशोधन अधिनियम मध्यस्थता कार्यवाही पर भी लागू होगा।

यदि धारा 26 के पहले भाग को सकारात्मक भाषा में जोड़ा गया होता (दूसरे भाग की तरह), तो एक जोड़ देना आवश्यक होता। प्रावधान में कहा गया है कि संशोधन अधिनियम संशोधन से पहले शुरू की गई मध्यस्थता कार्यवाही पर भी

लागू होगा यदि पक्ष सहमत हों। दोनों ही मामलों में, विधायिका का इरादा समान रहता है, नकारात्मक रूप आवश्यक परंतुक के साथ ठीक वही बताता है जो सकारात्मक रूप से कहा जा सकता था।

जाहिर है, "मध्यस्थता कार्यवाही" को हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v में शामिल किया गया है।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

पहला भाग दूसरे भाग में फिर से प्रकट नहीं हो सकता है, और अभिव्यक्ति

" इसलिए, मध्यस्थता कार्यवाही के संबंध में "केवल लागू होगा

अदालती कार्यवाही जो मध्यस्थता कार्यवाही से संबंधित है। द.

धारा 26 की योजना इस प्रकार स्पष्ट हैः कि संशोधन अधिनियम है

प्रकृति में संभावित, और उन मध्यस्थता कार्यवाही पर लागू होगा

जो आरंभ किए गए हैं, जैसा कि मूलधन की धारा 21 द्वारा समझा गया है।

अधिनियम, संशोधन अधिनियम पर या उसके बाद, और अदालती कार्यवाही के लिए जो संशोधन अधिनियम के आने पर या उसके बाद शुरू हुए हैं।

बलपूर्वक "।

(जोर दिया गया)

37. न्यायालय श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट के लिए जीवित था।

प्रस्तावित धारा 87 का संशोधन, जैसा कि फुटनोट से स्पष्ट है

निर्णय के अनुच्छेद 44 पर लटकाया गया। इसके बाद अदालत ने

2015 के एन. एन. डी. एम. टी. अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में निम्नानुसार कहा गया हैः

" 77. हालांकि, यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि संशोधन

अधिनियम निम्नलिखित कारणों से अधिनियमित किया गया था, जैसे कि

संशोधन अधिनियम के उद्देश्य और कारण बताते हैंः

" 2. यह अधिनियम मामलों के त्वरित निपटारे के लिए बनाया गया था

मध्यस्थता कार्यवाही और हस्तक्षेप में वृद्धि मध्यस्थता मामलों में अदालतें, जो उद्देश्य को विफल करती हैं

अधिनियम से। कठिनाइयों को दूर करने के लिए, मामला

भारत के विधि आयोग को भेजा गया था, जिसने जाँच की थी

विस्तार से जारी किया और अपनी 176 वीं रिपोर्ट प्रस्तुत की। इसके आधार पर

विधेयक, 2003 को राज्यसभा में 22-12-2003 पर पेश किया गया था। द. कहा गया कि विधेयक को विभाग से संबंधित संसद को भेजा गया था

कार्मिक, लोक शिकायत, कानून और अन्य मामलों की स्थायी समिति

जाँच और रिपोर्ट के लिए न्याय। उक्त समिति,

4-8-2005 पर संसद को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें

इसकी सिफारिशों पर विचार करने के बाद कानून बनाया जा सकता है। तदनुसार, उक्त विधेयक को राज्यसभा से वापस ले लिया गया।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

" अगस्त 2014 में मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 में संशोधन और अधिनियम में विभिन्न संशोधनों की सिफारिश की गई। अधिनियम में प्रस्तावित संशोधनों से सुविधा होगी और वैकल्पिक विवाद तंत्र को प्रोत्साहित करना, विशेष रूप से मध्यस्थता, विवादों के निपटारे के लिए अधिक उपयोगकर्ता के अनुकूल, लागत प्रभावी और मामलों के त्वरित निपटान के लिए क्योंकि भारत इसके लिए प्रतिबद्ध है

मामलों के निपटारे में बाधा डालने के लिए अपने कानूनी ढांचे में सुधार करना।

4. चूंकि अनुबंध प्रवर्तन में भारत दुनिया के 189 देशों में से 178 वें स्थान पर है, इसलिए अब समय आ गया है कि अनुबंधों को तेजी से लागू करने, अनुबंधों की आसान वसूली के लिए तत्काल कदम उठाए जाएं। मौद्रिक दावे और नुकसान के लिए उचित मुआवजे का अधिनिर्णय और अदालतों में लंबित मामलों को कम करता है और मध्यस्थता के माध्यम से विवाद समाधान की प्रक्रिया को तेज करता है, ताकि निवेश और आर्थिक गतिविधि को प्रोत्साहित किया जा सके।

5. चूंकि संसद का सत्र नहीं चल रहा था और तत्काल कदम उठाए गए थे भारत को एक मजबूत कानूनी ढांचे वाले निवेशक अनुकूल देश के रूप में पेश करके विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 में आवश्यक संशोधन करने के लिए राष्ट्रपति ने मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अध्यादेश, 2015 जारी किया।

6. मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) विधेयक, 2015 पेश करने का प्रस्ताव है, ताकि मध्यस्थता और सुलह को प्रतिस्थापित किया जा सके।

सुलह (संशोधन) अध्यादेश, 2015, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं -

(i) "न्यायालय" की परिभाषा में संशोधन करना ताकि यह प्रावधान किया जा सके कि अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता के मामले में, न्यायालय

उच्च न्यायालय होना चाहिए;

((ii) यह सुनिश्चित करने के लिए कि एक भारतीय न्यायालय अंतरिम उपाय आदि देने के लिए अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर सकता है, यहां तक कि जहां

मध्यस्थता भारत के बाहर है;

((iii) मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए आवेदन होगा -

उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय, जैसा भी मामला हो, द्वारा यथासंभव शीघ्रता से निपटाया गया और

साठ दिनों की अवधि के भीतर मामले को निपटाने का प्रयास किया जाना चाहिए; हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

((iv) यह प्रावधान करना कि मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए किसी भी आवेदन पर विचार करते समय, उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय प्रथम दृष्टया मध्यस्थ के अस्तित्व की जांच करेगा।

मध्यस्थता समझौता और अन्य मुद्दे नहीं;

(v) यह उपबंध करने के लिए कि मध्यस्थ न्यायाधिकरण निर्देश पर प्रवेश करने की तारीख से बारह महीने की अवधि के भीतर अपना निर्णय देगा और पक्षकार, हालांकि, ऐसी अवधि को छह महीने तक बढ़ा सकते हैं, जिसके बाद केवल न्यायालय द्वारा कोई विस्तार दिया जा सकता है।

पर्याप्त कारण;

(vi) के आधार पर एक मॉडल शुल्क अनुसूची प्रदान करने के लिए

कौन से उच्च न्यायालय मध्यस्थ न्यायाधिकरण की फीस के निर्धारण के उद्देश्य से नियम बना सकते हैं, जहां एक उच्च न्यायालय

न्यायालय धारा 11 के अनुसार मध्यस्थ की नियुक्ति करता है

अधिनियम;

(vii) यह प्रावधान करना कि विवाद करने वाले पक्ष किसी भी स्तर पर लिखित रूप में सहमत हो सकते हैं कि उनके विवाद का समाधान इसके माध्यम से किया जाए।

त्वरित प्रक्रिया और ऐसे मामलों में पुरस्कार

छह महीने की अवधि के भीतर किया जाना;

(viii) मध्यस्थों की तटस्थता का प्रावधान करना, जब कोई व्यक्ति

मध्यस्थ के रूप में संभावित नियुक्ति के संबंध में संपर्क किया जाता है;

(ix) पुरस्कार को चुनौती देने के लिए उस आवेदन को प्रदान करना है

न्यायालय द्वारा एक वर्ष के भीतर निपटाया जाए।

7. विधेयक में प्रस्तावित संशोधन यह सुनिश्चित करेंगे कि मध्यस्थता प्रक्रिया अधिक उपयोगकर्ता के अनुकूल, लागत प्रभावी हो और मामलों के त्वरित निपटान की ओर ले जाए। 78. सरकार को उपरोक्त उद्देश्यों और कारणों के विवरण को सबसे आगे रखने के लिए अच्छी तरह से सलाह दी जाएगी, यदि वह सरकार की प्रेस विज्ञप्ति दिनांक 7-3-2018 में दर्शाई गई तर्ज पर धारा 87 को लागू करने का प्रस्ताव करती है। प्रस्तावित धारा 87 का तत्काल प्रभाव संशोधन अधिनियम द्वारा किए गए सभी महत्वपूर्ण संशोधनों, जैसे कि विशेष रूप से धारा 28 और 34 में किए गए महत्वपूर्ण संशोधनों, जो कि, जैसा कि उद्देश्यों और कारणों के विवरण, [2019] 17 एस. सी. आर. द्वारा कहा गया है, पर रोक लगाना होगा।

और अब 23-10-2015 के बाद दायर की गई धारा 34 याचिकाओं पर लागू नहीं होगा, लेकिन उन मामलों में दायर की गई धारा 34 याचिकाओं पर लागू होगा जहां मध्यस्थता की कार्यवाही स्वयं 23-10-2015 के बाद ही शुरू हुई है। इसका मतलब यह होगा कि सभी मामलों में जो पाइपलाइन में हैं, इस तथ्य के बावजूद कि धारा 34 की कार्यवाही 23-10-2015 के बाद ही शुरू की गई है, फिर भी, पुराना कानून लागू होता रहेगा जिसके परिणामस्वरूप मध्यस्थता के निपटारे में देरी होगी। अदालतों के बढ़ते हस्तक्षेप से कार्यवाही, जो अंततः 1996 के अधिनियम के उद्देश्य को विफल कर देती है। [इन संशोधनों का प्रभाव है, जैसा कि एच. आर. डी. निगम में कहा गया है। वी. गेल (इंडिया) लिमिटेड, (2018) 12 एस. सी. सी. 471 पुरस्कारों के लिए चुनौती के आधार को सीमित करने के लिए

निम्नलिखित हैः (एस. सी. सी पी. 493, पैरा 18) "18. वास्तव में, उसी विधि आयोग की रिपोर्ट ने धारा 28 और 34 में संशोधन किया है ताकि अधिनियम के तहत उपलब्ध चुनौती के आधार को कम किया जा सके। ओ. एन. जी. सी. लिमिटेड बनाम में निर्णय सॉ पाइप्स लिमिटेड (2003) 5 एस. सी. सी. 705 को स्पष्ट रूप से समाप्त कर दिया गया है। ओ. एन. जी. सी. लिमिटेड बनाम में भी यही निर्णय है। वेस्टर्न गेको इंटरनेशनल लिमिटेड (2014) 9 एस. सी. सी. 263। धारा 34 और 48 दोनों को रेनुसागर पावर प्लांट कंपनी लिमिटेड में निहित कानून की स्थिति में वापस लाया गया है।

वी. जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी, 1994 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 644, जहां "सार्वजनिक नीति" में अब उसमें निर्धारित तीन चीजों में से केवल दो ही शामिल होंगी। भारतीय कानून की मौलिक नीति "और" न्याय या नैतिकता "। "भारत के हित" से संबंधित आधार नं.

अधिक समय तक मिलता है। " भारतीय कानून की मौलिक नीति को अब रेनुसागर, 1994 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 644 में निर्धारित के रूप में समझा जाना है। न्याय या नैतिकता को कड़ा कर दिया गया है और अब होना है

इसे केवल न्याय और नैतिकता की बुनियादी धारणाओं के अर्थ के रूप में समझा जाता है अर्थात ऐसी धारणाएं जो न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर दें, जैसा कि एसोसिएट बिल्डर्स बनाम में समझा गया है। डी. डी. ए. (2015) 3 एस. सी. सी. 49: (2015) 2 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 204 धारा 28 (3) में भी संशोधन किया गया है ताकि इसे एसोसिएट में इस न्यायालय के फैसले के अनुरूप लाया जा सके।

बिल्डर्स, (2015) 3 एससीसी 49: (2015) 2 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 204, यह स्पष्ट करते हुए कि अनुबंध की शर्तों का निर्माण मुख्य रूप से मध्यस्थ को तय करना है जब तक कि यह नहीं पाया जाता है कि

निर्माण संभव नहीं है। ”] यह याद रखना महत्वपूर्ण होगा कि 246 वें विधि आयोग की रिपोर्ट में स्वयं हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v है।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

कार्यवाहियों को दो भागों में विभाजित किया, ताकि संशोधन अधिनियम 23 को या उसके बाद शुरू हुई अदालती कार्यवाही पर लागू हो सकता है।

10-2015 . यह मूल योजना है जिसका अनुभाग द्वारा पालन किया जाता है।

26 संशोधन अधिनियम, जिसे विस्थापित नहीं किया जाना चाहिए

संशोधन अधिनियम के अधिनियमन का उद्देश्य ही होगा

अन्यथा पराजित हो जाएँगे।

(जोर दिया गया)

पैराग्राफ 83 में, अदालत ने तब निष्कर्ष निकालाः

" 83. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, अपीलों का वर्तमान समूह है -

बर्खास्त कर दिया। फैसले की एक प्रति मंत्रालय को भेजी जानी है। विधि और न्याय विभाग और भारत के विद्वान महान्यायवादी

ऊपर दिए गए पैरा 77 और 78 में जो कहा गया है उसे ध्यान में रखते हुए। ” 38. में वर्णित तरीके से धारा 26 का अर्थ लगाने के बाद

निर्णय में, इस न्यायालय ने सरकार को यह कहते हुए आगाह किया कि प्रस्तावित धारा 87 को लागू करने का तत्काल प्रभाव 2015 के उद्देश्यों और कारणों के कथन के सीधे विपरीत होगा।

संशोधन अधिनियम, जिसने यह स्पष्ट किया कि 2015 के संशोधन अधिनियम से पहले के कानून के परिणामस्वरूप मध्यस्थता कार्यवाही के निपटारे में देरी हुई,

और मध्यस्थता मामलों में अदालतों द्वारा हस्तक्षेप में वृद्धि, जो मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के प्राथमिक उद्देश्य को ही विफल कर देता है। इसलिए यह कहा गया कि 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा किए गए सभी संशोधन और विशेष रूप से महत्वपूर्ण संशोधन

धारा 28 और 34 को अब एक बैकबर्नर पर रखा जाएगा, जो

यह न केवल 246 वें विधि आयोग के दिमाग में जो था, उसके विपरीत होगा, बल्कि मध्यस्थता के कामकाज में पाए गए दोषों को ठीक करने के लिए किए गए हितकारी प्रावधानों के भी सीधे विपरीत होगा। अधिनियम, 1996।

39. इस बिंदु पर प्रासंगिक अनुच्छेदों का उल्लेख करना महत्वपूर्ण है।

धारा 87 को लागू करने वाले 2019 के संशोधन अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों का विवरण। उद्देश्यों और कारणों के कथन के पैराग्राफ 2 से 6 में, अकेले श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट का उल्लेख किया गया है, और विशेष राज्यों में पैराग्राफ 6 (vi) निम्नानुसार हैः

" 6. मध्यस्थता और सुलह की मुख्य विशेषताएं

(संशोधन) विधेयक, 2019, अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार हैः

(vi) यह स्पष्ट करना कि मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) अधिनियम, 2015 की धारा 26 केवल उन मध्यस्थता कार्यवाही पर लागू होती है जो 23 अक्टूबर, 2015 को या उसके बाद शुरू हुई थी और ऐसी अदालती कार्यवाही जो इस तरह के मध्यस्थता से उत्पन्न होती है। कार्यवाही "।

40. दिलचस्प बात यह है कि 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था। इसके बजाय, धारा 26 को हटा दिया गया था

41. डॉ. सिंघवी ने इस न्यायालय के कई फैसलों के आधार पर तर्क दिया है कि किसी फैसले के आधार को हटाने का सवाल तब तक नहीं उठ सकता जब तक कि फैसला लोगों के दिमाग में मौजूद न हो। विधायिका। उन्होंने कहा कि उन सभी प्रमुख मामलों में जिनमें अदालत के फैसले को उसके आधार को हटाकर रद्द कर दिया जाता है, विचाराधीन फैसले को संबंधित उद्देश्यों और कारणों के विवरण में स्पष्ट रूप से संदर्भित किया गया है। हमें डर है कि हम इस पंक्ति से सहमत नहीं हो सकते हैं

तर्क। महत्वपूर्ण बात यह देखना है कि क्या, सार में, आधार है

वास्तव में किसी विशेष निर्णय को हटा दिया जाता है, चाहे उस निर्णय का उल्लेख संशोधन अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के विवरण में किया गया हो या नहीं, जो इसके आधार को हटाने का प्रयास करता है।

42. श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड और अन्न में। वी. चौड़ी

बरो नगरपालिका और ओआरएस। (1969) 2 एस. सी. सी. 283, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

" 4 ..... मान लीजिए कि विधायी क्षमता, केवल यह घोषणा करना पर्याप्त नहीं है कि न्यायालय का निर्णय इसके लिए बाध्यकारी नहीं होगा, न्यायिक शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्णय को उलटने के समान है जो विधानमंडल के पास नहीं है या प्रयोग नहीं करता है। अदालत का निर्णय हमेशा बाध्यकारी होना चाहिए जब तक कि जिन शर्तों पर यह आधारित है, उन्हें इतना मौलिक रूप से परिवर्तित नहीं किया जाता है कि परिवर्तित परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था।

43. तमिलनाडु राज्य में v. अरूरन शुगर लिमिटेड (1997) 1

एस. सी. सी. 326, इस न्यायालय ने श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स (उपरोक्त) में जो निर्णय लिया था, उसे निर्धारित करने के बाद कहाः

" 16 ..... वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड बनाम के मामलों में भी यही विचार दोहराया गया था। मद्रास राज्य [(1963) 2 एससीआर 747: ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1753]; उदय राम शर्मा बनाम। भारत संघ [(1968) 3 एससीआर 41: ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1138]; तीरथ राम राजिंद्र

नाथ बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य [(1973) 3 एस. सी. सी. 585: 1973 एस. सी. सी. (कर) 300]; कृष्ण चंद्र गंगोपाध्याय हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

वी. भारत संघ [(1975) 2 एस. सी. सी. 303]; हिंदुस्तान गम एंड केमिकल्स लिमिटेड v. हरियाणा राज्य [(1985) 4 एस. सी. सी. 124]; उत्कल ठेकेदार और जॉइनरी (पी) लिमिटेड v. उड़ीसा राज्य [1987 पूरक एस. सी. सी. 751]; डी. कवासजी एंड कंपनी बनाम। मैसूर राज्य [1984 पूरक एस. सी. सी. 490: 1985 एस. सी. सी. (कर) 63] और भुवनेश्वर सिंह बनाम।

भारत संघ [(1994) 6 एस. सी. सी. 77]। यह विधायिका के लिए खुला है कि वह अदालत द्वारा बताए गए दोष को दूर करे या संशोधन करे

विचाराधीन अधिनियम की परिभाषा या कोई अन्य प्रावधान

पीछे की ओर। इस प्रक्रिया में यह नहीं कहा जा सकता है कि विधायिका द्वारा सत्ता पर अतिक्रमण किया गया है

न्यायपालिका। अदालत का निर्देश हमेशा बाध्यकारी होना चाहिए जब तक कि

जिन शर्तों पर यह आधारित है, वे इतनी मौलिक रूप से परिवर्तित हैं कि परिवर्तित परिस्थितियों में ऐसे निर्णय नहीं दिए जा सकते थे। इसमें विचाराधीन निर्णय में बताए गए क़ानून में दोष को हटाना, साथ ही उस अधिनियम के प्रावधानों में परिवर्तन या प्रतिस्थापन करना शामिल होगा, जिस पर ऐसा निर्णय आधारित है, पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ। .

44. इसी तरह, गोवा फाउंडेशन बनाम। गोवा राज्य (2016) 6 एस. सी. सी. इस न्यायालय ने निर्णय दियाः

" 24 ..... किसी विधायी या कार्यकारी अधिनियम को अमान्य करने की शक्ति न्यायालय के पास होती है। एक न्यायिक घोषणा, या तो घोषणात्मक या नागरिकों को अधिकार प्रदान करने वाली, बाद के विधायी अधिनियम द्वारा शून्य पर सेट नहीं की जा सकती है क्योंकि इसके लिए एक

न्यायिक शक्तियों का अतिक्रमण। हालांकि, विधायिका

न्यायालय के निर्णय के आधार को हटाकर पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ, यदि उचित समझा जाए, तो संशोधन या मान्यकारी अधिनियम पारित करने में सक्षम होगा। ऐसी स्थिति में भी अदालतें बाद के विधान के माध्यम से किसी निर्णय से उत्पन्न होने वाले अर्जित अधिकारों के पूर्वव्यापी अभाव को मंजूरी नहीं दे सकती हैं (मदन मोहन पाठक बनाम। भारत संघ [मदन मोहन पाठक बनाम। भारत संघ, (1978) 2 एस. सी. सी. 50: 1978 एस. सी. सी. (एल एंड एस) 103])। हालाँकि, जहाँ न्यायालय का निर्णय विशुद्ध रूप से घोषणात्मक है, वहाँ अदालतें न्यायालय के फैसले के आधार को पूर्वव्यापी रूप से भी हटाने के लिए विधायी शक्ति के समर्थन में झुकेंगी, जिससे पूर्व स्थिति की बहाली का मार्ग प्रशस्त होगा। हालांकि परिणाम

न्यायपालिका पर काबू पाने के लिए एक अभ्यास प्रतीत हो सकता है

घोषणा यह केवल पहली बार में ही शर्मनाक है; एक करीबी जांच इस तरह के अभ्यास पर वैधता प्रदान करेगी क्योंकि यह विधायी शक्ति का एक सामान्य सहायक है। पूरा अभ्यास [2019] 17 एस. सी. आर. में से एक है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायपालिका और विधायिका जैसे दो निकायों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले अधिकार क्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रों को देखना। संतुलनकारी कार्य,

यद्यपि यह नाजुक है, संवैधानिक योजना उन अच्छी तरह से परिभाषित मूल्यों द्वारा निर्देशित है जो बख्तावर ट्रस्ट में इस न्यायालय के विचारों में संक्षिप्त अभिव्यक्ति पाई गई है। एम. डी. नारायण, (2003) 5 एस. सी. सी. 298]

45. उपरोक्त निर्णयों को देखते हुए, 2019 के संशोधन अधिनियम की धारा 15 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को शुरू से ही हटाकर बी. सी. सी. आई. (ऊपर) के आधार को हटा देती है। चूँकि यह वह प्रावधान है जिसका बी. सी. सी. आई. के फैसले (उपरोक्त) में अर्थ लगाया गया है, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त फैसले के एक मौलिक आधार को उसी दिन से पूर्वव्यापी रूप से धारा 26 को पूरी तरह से हटा दिया गया है जब यह लागू हुई थी। इसलिए इस तर्क को खारिज किया जाना चाहिए।

संशोधन अधिनियम। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि धारा 87 की योजना धारा 26 की योजना से अलग है, और यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि न्यायालय की कार्यवाही केवल मध्यस्थता कार्यवाही पर परजीवी है। यह है। इसलिए यह स्पष्ट करें कि 2015 का संशोधन अधिनियम लागू होता है या नहीं, यह देखने के लिए केवल मध्यस्थता कार्यवाही पर विचार किया जाना चाहिए। इसलिए श्री कौल के इस तर्क को स्वीकार करना संभव नहीं है कि वर्तमान मामले में पहले इसके आधार को हटाए बिना इस न्यायालय के फैसले पर सीधा हमला किया गया है।

2019 के संशोधन अधिनियम को संवैधानिक चुनौती

47. यह अब परीक्षा के लिए चरण निर्धारित करता है

मध्यस्थता अधिनियम, 1996 में धारा 87 को लागू करने और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14,19 (1) (जी), 21 और अनुच्छेद 300-ए के खिलाफ 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को हटाने की संवैधानिक वैधता।

श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]धारा 87 की शुरूआत को इस तथ्य के कारण संशोधित किया गया कि

2015 की पहुंच पर उच्च न्यायालय के परस्पर विरोधी निर्णय

उस समय का अधिनियम जब समिति ने इस पर विचार-विमर्श किया था। श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट में यह कहा गया थाः

" हालाँकि, धारा 26 अदालत की कार्यवाही में 2015 के संशोधन अधिनियम की प्रयोज्यता पर चुप रही है, दोनों लंबित और

23 से पहले शुरू हुए मध्यस्थता के मामले में नया शुरू किया गया अक्टूबर 2015। भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों ने अलग-अलग फैसले लिए हैं।

2015 के संशोधन अधिनियम के लागू होने पर विचार

अदालती कार्यवाही। मोटे तौर पर, विचारों के तीन समूह हैं संक्षेप में नीचे दिया गया हैः

(क) 2015 का संशोधन अधिनियम अदालती कार्यवाही (ताजा और लंबित) पर लागू नहीं होता है, जहां मध्यस्थता कार्यवाही, जिससे वे संबंधित हैं, 23 से पहले शुरू हुई थी।

अक्टूबर 2015।

(ख) धारा 26 का पहला भाग दूसरे की तुलना में संकीर्ण है और केवल पहले शुरू की गई मध्यस्थता कार्यवाही को शामिल नहीं करता है।

2015 के संशोधन अधिनियम के लागू होने से 23 अक्टूबर 2015 तक। 2015 का संशोधन अधिनियम,

हालाँकि, इससे पहले शुरू की गई मध्यस्थता कार्यवाही के संबंध में नई या लंबित अदालती कार्यवाही पर लागू होता है
23 अक्टूबर 2015।

(ग) धारा 26 में "मध्यस्थता कार्यवाही" शब्द को संबंधित अदालती कार्यवाही को शामिल करने के लिए नहीं माना जा सकता है।

तदनुसार, 2015 का संशोधन अधिनियम 23 अक्टूबर 2015 को या उसके बाद शुरू हुए सभी मध्यस्थताओं पर लागू होता है। जहां तक अदालती कार्यवाही का संबंध है, 2015 का संशोधन अधिनियम 23 अक्टूबर 2015 से सभी अदालती कार्यवाही पर लागू होगा, जिसमें नई या लंबित अदालत भी शामिल है।

मध्यस्थता के संबंध में कार्यवाही पहले शुरू की गई थी,

23 अक्टूबर 2015 को या उसके बाद।

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि इस बारे में काफी भ्रम है

संबंधित न्यायालय पर 2015 के संशोधन अधिनियम की प्रयोज्यता मध्यस्थता की कार्यवाही 23 अक्टूबर से पहले शुरू हुई

2015. समिति का विचार है कि एक उपयुक्त विधायी

इस मुद्दे को हल करने के लिए संशोधन की आवश्यकता है।

और पक्षों के प्रति पूर्वाग्रह, क्योंकि उन्हें फिर से सुनना पड़ सकता है। यह. 2015 का संशोधन अधिनियम बनाना भी उचित नहीं हो सकता है।

इस प्रकार के संबंध में नई अदालती कार्यवाही पर लागू मध्यस्थता, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप एक असंगत स्थिति हो सकती है। इसलिए,

यह महसूस किया जाता है कि इसकी प्रयोज्यता को सीमित करना वांछनीय हो सकता है 2015 मध्यस्थताओं के लिए संशोधन अधिनियम 23 को या उसके बाद शुरू हुआ

अक्टूबर 2015 और संबंधित अदालती कार्यवाही।

(जोर दिया गया)

48. श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट दिनांकित 30.07.2017 है, जो

बी. सी. सी. आई. मामले (ऊपर) में इस अदालत के फैसले से बहुत पहले है। विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा व्याख्या के कारण जो भी अनिश्चितता रही होगी, वह बी. सी. सी. आई. के परिणामस्वरूप गायब हो गई है।

निर्णय (ऊपर), 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 पर कानून को बहुत स्पष्टता के साथ निर्धारित किया जा रहा है। इसके बाद इस हितकारी प्रावधान को हटाना और इसके स्थान पर धारा 87 को लागू करना पूरी तरह से बिना किसी औचित्य के और 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के विपरीत होगा, जिसे एक विस्तृत विधि आयोग की रिपोर्ट के अनुसार अधिनियमित किया गया था, जिसमें आयोग के कामकाज में विभिन्न खामियां पाई गई थीं।

मूल 1996 का क़ानून। इसके अलावा, यह समझ में नहीं आता है कि कैसे "अनिश्चितता और पूर्वाग्रह पैदा होगा, क्योंकि उन्हें फिर से सुनना पड़ सकता है", जिसके परिणामस्वरूप एक "असंगत स्थिति" हो सकती है। संशोधित कानून लंबित अदालती कार्यवाही पर लागू होगा, जिसे तब लागू करना होगा -

उसके अनुसार निपटाया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप 2015 के संशोधन अधिनियम के लाभ अब लागू किए जा रहे हैं। श्रीकृष्ण के संदर्भ में

समिति की रिपोर्ट (इस न्यायालय के फैसले का बिल्कुल भी उल्लेख किए बिना) निर्णय में इस तरह के प्रावधान का पालन करने के नुकसान को इंगित करने के बाद भी, धारा 87 और धारा 26 को हटा देगी।

2015 का संशोधन अधिनियम स्पष्ट रूप से मनमाना है, जिसे अनुचित रूप से, पर्याप्त निर्धारण सिद्धांत के बिना, और मध्यस्थता अधिनियम, 1996 और 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा सार्वजनिक हित के विपरीत अधिनियमित किया गया है। यही कारण है कि बी. सी. सी. आई. के निर्णय (उपर्युक्त) का एक प्रमुख निष्कर्ष यह है कि धारा 87 को लागू करने से मध्यस्थता कार्यवाही के निपटारे में देरी होगी, और मध्यस्थता

मामलों में अदालतों के हस्तक्षेप में वृद्धि होगी, जो मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के उद्देश्य को विफल कर देगा, जिसे 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा मजबूत किया गया था।

हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

49. इसके अलावा, इस न्यायालय ने बार-बार कहा है कि मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत एक आवेदन एक संक्षिप्त कार्यवाही है।

नियमित सूट की प्रकृति में नहीं-केनरा निधि लिमिटेड v. देखें। पैराग्राफ 20 पर एम. शशिकल 2019 एससीसी ऑनलाइन एससी 1244। नतीजतन, धारा 34 के तहत एक मध्यस्थता पुरस्कार की समीक्षा करने वाली अदालत इसमें नहीं बैठती है। पुरस्कार पर अपील, और यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण संभव है, तो एसोसिएटेड कंस्ट्रक्शन v देखने के लिए कोई हस्तक्षेप नहीं कहा जाता है।

पवनहंस हेलीकॉप्टर लिमिटेड (2008) 16 एस. सी. सी. 128 पैरा 17 पर। 50. इसके अलावा, जैसा कि हाल के निर्णय सांगयोंग इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम में किया गया है। एनएचएआई 2019 एससीसी ऑनलाइन

677 , 2015 के संशोधन अधिनियम के बाद, यह न्यायालय गुण-दोष के आधार पर मध्यस्थता निर्णय में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है (पैराग्राफ 28 और 76 देखें)। अतः सी. पी. सी. के आदेश एक्स. एल. आई. नियम 5 की विसंगति पूर्ण अपीलों के मामले में लागू होती है और मध्यस्थता अधिनियम, 1996 की धारा 36 के कारण लागू नहीं होती है जब मध्यस्थता की समीक्षा की बात आती है।

पुरस्कार, (जहां एक अपील मूल कार्यवाही की पुनः सुनवाई की प्रकृति में है, जहां सफल होने की संभावना धारा 34 के तहत मध्यस्थता पुरस्कारों की प्रतिबंधित समीक्षा की तुलना में कहीं अधिक है), स्वयं एक ऐसी परिस्थिति है जो धारा 87 के अधिनियमन के खिलाफ है। 2015 के संशोधन अधिनियम में किए गए संशोधनों को, विशेष रूप से धारा 36 को एक बैकबर्नर पर रखना। इस कारण से भी, धारा 87 को अनुच्छेद 14 के तहत स्पष्ट रूप से मनमाना बताते हुए निरस्त किया जाना चाहिए। याचिकाकर्ताओं ने

यह कहना भी सही है कि जब धारा 36 के गलत निर्माण की शरारत को 19 साल से अधिक की अवधि के बाद ठीक किया गया था

2015 में विधायी हस्तक्षेप, अब विपरीत दिशा में काम करने और उपरोक्त शरारत को वापस लाने के लिए स्पष्ट रूप से परिणाम देता है मनमानी। स्वतः स्थगन का पूर्वव्यापी पुनरुत्थान न केवल मध्यस्थता अधिनियम, 1996 और 2015 के संशोधन अधिनियम के उद्देश्य के विपरीत घड़ी को पीछे की ओर मोड़ देता है, बल्कि इसके परिणामस्वरूप पुरस्कार धारकों को संशोधित धारा 36 के तहत पहले से ही भुगतान किया जा चुका है। वास्तव में, हमारे समक्ष कुछ मामलों में धनवापसी के आवेदन दायर किए गए हैं, जिसमें प्रार्थना की गई है कि सशर्त स्थगन आदेशों के परिणामस्वरूप भुगतान के लिए जारी किए गए धन को निर्णय-देनदार को वापस कर दिया जाए।

51. इसके अलावा, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि श्रीकृष्ण समिति की रिपोर्ट में दिवाला संहिता के प्रावधानों का उल्लेख नहीं किया गया था। इसके बाद

01.12.2016 पर दिवाला संहिता का आगमन, इसका परिणाम धारा 87 को लागू करना यह है कि इस न्यायालय के निर्णयों द्वारा निर्धारित स्वचालित-स्थगन सिद्धांत के कारण-जिसे आज केवल [2019] 17 एस. सी. आर. द्वारा उलट दिया गया है।

वर्तमान निर्णय-पुरस्कार धारक अपने आपूर्तिकर्ताओं को अपने भुगतान पर चूक करके दिवालिया हो सकता है, जब ऐसे भुगतान उन मामलों में मध्यस्थता पुरस्कारों से आने वाले होंगे जहां कोई रोक नहीं है, या यहां तक कि उन मामलों में भी जहां सशर्त रोक दी जाती है। इसके अलावा, एक मध्यस्थ पुरस्कार धारक अपने पुरस्कार के फल से वंचित हो जाता है-जो आमतौर पर कई वर्षों के मुकदमेबाजी के बाद प्राप्त किया जाता है-स्वचालित ठहराव के परिणामस्वरूप, जबकि उसे अपने परिचालन लेनदारों को तत्काल भुगतान का सामना करना पड़ेगा, जो भुगतान मध्यस्थता पुरस्कारों के स्वचालित ठहराव के कारण धन जारी नहीं होने के कारण नहीं हो सकता है, जिससे ऐसे पुरस्कार धारक दिवाला संहिता की कठोरता से उजागर हो जाते हैं। इन सभी कारणों से, 2015 के संशोधन अधिनियम की धारा 26 को हटाने के साथ-साथ 2019 के संशोधन अधिनियम द्वारा मध्यस्थता अधिनियम, 1996 में धारा 87 को शामिल करने को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत स्पष्ट रूप से मनमाना होने के रूप में खारिज कर दिया गया है।

52. हालाँकि, विद्वान महान्यायवादी ने कई निर्णयों का हवाला दिया जिसमें कहा गया है कि अदालत को आम तौर पर कट-ऑफ तिथियों के निर्धारण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि ऐसा निर्धारण मनमाना या भेदभावपूर्ण न लगे (उदाहरण के लिए देखें, यू. ओ. आई. बनाम। परमेश्वरन मैच वर्क्स

(1975) 1 पैराग्राफ 10 2 में एस. सी. सी. 305 और सरकार। ए. पी. वी. एन. सुब्बारायुडु (2008) 14 एस. सी. सी. 702 पैराग्राफ 5 से 9 3 पर)।

53. वर्तमान मामले में, चुनौती आई. डी. 1 को कट-ऑफ तिथि के रूप में तय करने की नहीं है, क्योंकि उपरोक्त तिथि वह तिथि है जिस पर 2015 का संशोधन अधिनियम लागू हुआ था। इस कारण से, उपरोक्त निर्णयों का कोई अनुप्रयोग नहीं है। इसके बजाय, जो स्पष्ट रूप से मनमाना पाया गया है, वह है न्यायालय की कार्यवाही और मध्यस्थता कार्यवाही का उपरोक्त तिथि के संदर्भ में विभाजन न करना, जिसके परिणामस्वरूप मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के कामकाज में सुधार हुआ है। इसलिए भारत के विद्वान महान्यायवादी के इस तर्क को भी खारिज किया जाना चाहिए।

2 " 10 ..... वर्गीकरण के लिए एक आधार के रूप में एक तारीख के चयन को हमेशा मनमाना नहीं कहा जा सकता है, भले ही पसंद के लिए कोई विशेष कारण सामने न आए जब तक कि

परिस्थितियों में मनमौजी या सनकी दिखाया गया है। जहां यह देखा जाता है कि कोई रेखा या बिंदु होना चाहिए, और इसे ठीक से तय करने का कोई गणितीय या तार्किक तरीका नहीं है, तो विधायिका या उसके प्रतिनिधि के निर्णय को तब तक स्वीकार किया जाना चाहिए जब तक कि हम यह नहीं कह सकते कि यह उचित निशान से बहुत व्यापक है।

3 " 5 ..... इस न्यायालय का यह भी विचार है कि कट-ऑफ तिथियां तय करना कार्यकारी प्राधिकरण के अधिकार क्षेत्र में है और अदालत को आम तौर पर कार्यकारी प्राधिकरण द्वारा कट-ऑफ तिथि तय करने में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि ऐसा अदालत का आदेश स्पष्ट रूप से भेदभावपूर्ण और मनमाना प्रतीत न हो। हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

54. परिणाम यह है कि बी. सी. सी. आई. का निर्णय (उपरोक्त) इसलिए लागू होता रहेगा ताकि हितकारी संशोधनों को लागू किया जा सके।

2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा 23.10.2015 के बाद शुरू की गई सभी अदालती कार्यवाही के लिए किया गया। 55. इस मामले को देखते हुए, अनुच्छेदों के आधार पर 2019 के संशोधन अधिनियम को संवैधानिक चुनौती देने की जांच करना अनावश्यक है

19 (1) (छ), 21 और 300-भारत के संविधान का ए।

दिवाला संहिता के लिए संवैधानिक चुनौती

56. अब यह हम पर निर्भर करता है कि हम वर्तमान रिट याचिकाओं में दी गई चुनौतियों के दूसरे भाग का निर्णय करें, अर्थात

दिवाला संहिता की संवैधानिकता। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, डॉ. सिंघवी ने तर्क दिया है कि दिवाला संहिता के प्रावधान उनके मुवक्किल पर मनमाने ढंग से काम करेंगे क्योंकि एक ओर, मध्यस्थता अधिनियम, 1996 के तहत उनके पक्ष में मध्यस्थता पुरस्कारों पर स्वतः रोक लगा दी जाएगी, जिसके परिणामस्वरूप उन धन का उपयोग उनके मुवक्किल के लेनदारों के ऋणों का भुगतान करने के लिए नहीं किया जा सकता है। दूसरी ओर, किसी वित्तीय या परिचालन लेनदार का एक लाख रुपये से अधिक का कोई भी ऋण जिसका भुगतान नहीं किया गया है, दिवाला के प्रावधानों को आकर्षित करेगा।

याचिकाकर्ता संख्या 1 के खिलाफ संहिता-इन प्रावधानों को मनमाना, भेदभावपूर्ण और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 19 (1) (जी) का उल्लंघन करने वाला बनाना। नतीजतन, उन्होंने सुझाव दिया है कि अपने मुवक्किल के लिए, में

बदले में, सरकारी कंपनियों और एन. एच. ए. आई. से धन की वसूली के लिए, दिवाला संहिता की धारा 3 (7) में निहित 'निगमित व्यक्ति' की परिभाषा को या तो परिभाषा के तीसरे भाग में निहित 'सीमित दायित्व के साथ' शब्दों के बिना पढ़ा जाना चाहिए, या दिवाला संहिता की धारा 3 (23) (जी) होनी चाहिए, जो कि 'व्यक्ति' की परिभाषा है, जिसे उपरोक्त प्रावधान में पढ़ा जाना चाहिए। इस तर्क को समझने के लिए इन परिभाषाओं को निर्धारित करना आवश्यक हैः

" परिभाषाएँ

3. इस संहिता में, जब तक कि संदर्भ अन्यथा आवश्यक न हो,

XXX XXX XXX

(7) " निगमित व्यक्ति "से खंड में परिभाषित कंपनी अभिप्रेत है

(20) कंपनी अधिनियम, 2013 (2013 का 18) की धारा 2 की, सीमित देयता भागीदारी अधिनियम, 2008 (2009 का 6) की धारा 2 की उप-धारा (1) के खंड (एन) में परिभाषित एक सीमित देयता भागीदारी, या सीमित देयता [2019] 17 एस. सी. आर. के साथ निगमित कोई अन्य व्यक्ति।

उस समय लागू किसी भी कानून के तहत, लेकिन इसमें शामिल नहीं होगा

(8) " निगमित देनदार "का अर्थ है एक निगमित व्यक्ति जिसका किसी व्यक्ति पर ऋण है; (23) " व्यक्ति में शामिल हैं

((क) एक व्यक्ति;

((ख) एक हिंदू अविभाजित परिवार;

((ग) एक कंपनी; ((घ) एक न्यास;

(ई) एक साझेदारी;

(च) एक सीमित देयता साझेदारी;

(छ) किसी कानून के तहत स्थापित कोई अन्य इकाई;

और इसमें भारत के बाहर रहने वाला व्यक्ति भी शामिल है।

57. जैसा कि विद्वान सॉलिसिटर जनरल, श्री ए. आर. मेहता द्वारा सही ढंग से तर्क दिया गया है, 'कॉर्पोरेट व्यक्ति' के पहले भाग का अर्थ है, जैसा कि दिवाला संहिता की धारा में परिभाषित किया गया है, जैसा कि खंड में परिभाषित किया गया है।कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 2। धारा 2 (20) और 2 (45) ई कंपनी अधिनियम, 2013, जो 'कंपनी' और 'सरकार' को परिभाषित करती है।

किसी भी 'को क्रमशः नीचे दिया गया हैः

" 2 (20) . " कंपनी "का अर्थ है इस अधिनियम के तहत निगमित कंपनी।

या किसी पिछले कंपनी कानून के तहत; " " 2 (45) . " "सरकारी कंपनी" से ऐसी कोई कंपनी अभिप्रेत है जिसमें

चुकता शेयर पूंजी का कम से कम 51 प्रतिशत केंद्र सरकार या किसी राज्य सरकार या सरकार या आंशिक रूप से केंद्र सरकार और आंशिक रूप से एक या अधिक राज्य सरकारों के पास होता है और इसमें एक ऐसी कंपनी शामिल होती है जो ऐसी सरकारी कंपनी की सहायक कंपनी है। 99

58. उपरोक्त परिभाषा को पढ़ने के बाद, श्री तुषार मेहता ने स्पष्ट रूप से कहा कि याचिकाकर्ता संख्या 1 को सभी पुरस्कारों के तहत धन देने वाली तीन संस्थाएं, जो सरकारी कंपनियां हैं, उन्हें परिभाषा के पहले भाग में शामिल किया जाएगा। हालांकि, ऐसा

डॉ. सिंघवी के दिवाला संहिता की धारा 3 (7) में शब्दों को हटाने या कुछ हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड को जोड़ने के तर्क से एनएचएआई चिंतित है।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

दिवाला संहिता की धारा 3 (23) (जी) में धारा 3 (7) के शब्दों को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

राष्ट्रीय राजमार्ग एक सरकारी कार्य है जो भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची I की प्रविष्टि 23 के अंतर्गत आता है। इसके अलावा, राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956 की धारा 5 के तहत, केंद्र सरकार यह निर्देश दे सकती है कि राष्ट्रीय राजमार्गों के विकास या रखरखाव के संबंध में कोई भी कार्य किसी भी राज्य द्वारा किया जा सकता है। केंद्र सरकार के अधीनस्थ अधिकारी या प्राधिकारी। इस प्रावधान के तहत, राष्ट्रीय गतिविधियों से संबंधित गतिविधियों के निष्पादन का कार्य

राजमार्गों को पहले राज्य सरकारों को एक के तहत सौंपा गया था " एजेंसी प्रणाली "। हालाँकि इस प्रणाली ने 40 वर्षों की अवधि के लिए राज्य लोक निर्माण विभागों के माध्यम से काम किया, क्योंकि कठिनाइयाँ थीं।

अनुभवी, केंद्र ने स्वयं एक राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के निर्माण के माध्यम से राष्ट्रीय राजमार्ग प्रणाली के विकास और रखरखाव को संभालने का फैसला किया।

60. एनएचएआई अधिनियम के निम्नलिखित प्रावधान प्रासंगिक हैं और नीचे दिए गए हैं:

" 3. प्राधिकरण का संविधान। (1) केंद्र सरकार जैसी तारीख से प्रभावी हो,

इसे भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण कहा जाए। (2) प्राधिकरण उपरोक्त नाम से एक निगमित निकाय होगा जिसका स्थायी उत्तराधिकार और शक्ति के साथ एक आम मुहर होगी।

इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन, चल और अचल दोनों संपत्ति का अधिग्रहण, धारण और निपटान करना और अनुबंध करना और

उक्त नाम से मुकदमा दायर किया जाएगा और मुकदमा चलाया जाएगा।

[(3) प्राधिकरण में शामिल होंगे -

((क) एक अध्यक्ष;

(ख) छह पूर्णकालिक सदस्यों से अधिक नहीं; और (ग) केंद्र सरकार द्वारा आधिकारिक अधिसूचना द्वारा नियुक्त किए जाने वाले छह से अधिक अंशकालिक सदस्य

राजपत्रः

बशर्ते कि केंद्र सरकार, की नियुक्ति करते समय

वित्तीय प्रबंधन, परिवहन योजना या कोई अन्य प्रासंगिक विषय।] XXX XXX XXX

12. केंद्र सरकार की परिसंपत्तियों और देनदारियों का प्राधिकरण को हस्तांतरण

(1) धारा 11 के तहत अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख को और उससे।

(क) उपगत सभी ऋण, दायित्व और देनदारियाँ, किए गए सभी अनुबंध और केंद्र सरकार द्वारा, उसके साथ या उसके लिए किए जाने वाले सभी मामले और चीजें, ऐसी तारीख से तुरंत पहले या उसके संबंध में

किसी राष्ट्रीय राजमार्ग या उसके किसी खंड के उद्देश्य जो उस धारा के तहत प्राधिकरण में निहित हैं या उसे सौंपे गए हैं, यह समझा जाएगा कि वे प्राधिकरण द्वारा, उसके साथ या उसके लिए किए गए हैं, किए गए हैं और किए गए हैं।

(ख) किसी राष्ट्रीय राजमार्ग या उसके किसी खंड के प्रयोजनों के लिए या उसके संबंध में केंद्र सरकार द्वारा या उसके लिए किए गए सभी गैर-आवर्ती व्यय,

प्राधिकरण में इस प्रकार निहित या सौंपा गया, ऐसी तारीख तक और द्वारा पूंजीगत व्यय घोषित किया गया

केंद्र सरकार, ऐसे नियमों और शर्तों के अधीन, जो निर्धारित की जा सकती हैं, केंद्र सरकार द्वारा प्राधिकरण को प्रदान की गई पूंजी के रूप में मानी जाएगी;

((c) केंद्र सरकार को देय सभी राशि

किसी भी राष्ट्रीय राजमार्ग या उसके किसी हिस्से के संबंध में, इस तरह से निहित या सौंपे गए प्राधिकरण को ऐसी तारीख से तुरंत पहले देय माना जाएगा -

प्राधिकरण;

(घ) केंद्र सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध ऐसी तारीख से ठीक पहले शुरू किए गए या शुरू की जा सकने वाले सभी मुकदमे और अन्य कानूनी कार्यवाही।

ऐसे राष्ट्रीय राजमार्ग या किसी खंड हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड के संबंध में मामला।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

प्राधिकरण द्वारा या उसके विरुद्ध इसे जारी या स्थापित किया जा सकता है।

(2) यदि कोई विवाद उत्पन्न होता है कि कौन सी संपत्ति, अधिकार या केंद्र सरकार की देनदारियों को प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया है, इस तरह के विवाद का निर्णय केंद्र द्वारा किया जाएगा

सरकार।

XXX XXX XXX

14. प्राधिकरण द्वारा अनुबंध।

धारा 15 के प्रावधानों के अधीन, प्राधिकरण इस अधिनियम के तहत अपने कार्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक किसी भी अनुबंध में प्रवेश करने और उसे पूरा करने में सक्षम होगा।

15. प्राधिकरण की ओर से अनुबंधों को निष्पादित करने का तरीका।

(1) प्रत्येक अनुबंध, प्राधिकरण की ओर से, अध्यक्ष या ऐसे अन्य सदस्य या प्राधिकरण के ऐसे अधिकारी द्वारा किया जाएगा।

प्राधिकरण जो इसमें आम तौर पर या विशेष रूप से सशक्त हो सकता है प्राधिकरण की ओर से और ऐसे अनुबंध या अनुबंधों के वर्ग जो विनियमों में निर्दिष्ट किए जा सकते हैं,

प्राधिकरण की आम मुहरः

बशर्ते कि ऐसे मूल्य या राशि से अधिक कोई अनुबंध नहीं किया जाएगा जो केंद्र सरकार इस संबंध में निर्धारित करे जब तक कि उसे उस सरकार द्वारा पहले अनुमोदित नहीं किया गया होः

बशर्ते कि अधिग्रहण या बिक्री के लिए कोई अनुबंध न हो

अचल संपत्ति या तीस वर्ष से अधिक की अवधि के लिए ऐसी किसी संपत्ति के पट्टे के लिए और केंद्र सरकार द्वारा इस संबंध में निर्धारित मूल्य या राशि से अधिक कोई अन्य अनुबंध तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि इसे पहले से अनुमोदित नहीं किया गया हो।

(2) उप-धारा (1) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, जिस रूप और तरीके से इस अधिनियम के तहत कोई अनुबंध किया जाएगा, ऐसा हो जो विनियमों द्वारा प्रदान किया जा सके।

(3) कोई भी अनुबंध जो इस अधिनियम और विनियमों के प्रावधानों के अनुसार नहीं है, प्राधिकरण के लिए बाध्यकारी नहीं होगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

16. प्राधिकरण के कार्य।

(1) इस संबंध में केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए नियमों के अधीन रहते हुए, प्राधिकरण का कार्य होगा कि वह निम्नलिखित को विकसित करे -

राष्ट्रीय राजमार्गों और सरकार द्वारा इसमें निहित या सौंपे गए किसी भी अन्य राजमार्ग का रखरखाव और प्रबंधन करना।

(2) उप-धारा (1) में निहित प्रावधानों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, प्राधिकरण अपने प्रावधानों के निर्वहन के लिए कार्य

(क) राजमार्गों का सर्वेक्षण, विकास, रखरखाव और प्रबंधन

उसमें, या उसे सौंपा गया;

(ख) कार्यालयों या कार्यशालाओं का निर्माण और

होटल, मोटल, रेस्तरां और विश्राम कक्ष बनाए रखें।

या इसमें निहित या सौंपे गए राजमार्गों के पास;

(ग) इसके लिए आवासीय भवनों और कस्बों का निर्माण करना।

कर्मचारी;

(घ) उन राजमार्गों पर वाहनों के संचालन को विनियमित और नियंत्रित करता है जो इसमें निहित हैं या जिन्हें सौंपा गया है।

इसका प्रबंधन;

(ई) परामर्श और निर्माण का विकास और प्रदान करना।

भारत और विदेशों में सेवाएँ और अनुसंधान जारी रखें

राजमार्गों या वहाँ की किसी भी सुविधा के विकास, रखरखाव और प्रबंधन के संबंध में गतिविधियाँ;

(च) इसमें निहित या सौंपे गए राजमार्गों के उपयोगकर्ताओं के लिए ऐसी सुविधाएं और सुविधाएं प्रदान करें जो प्राधिकरण की राय में सुचारू प्रवाह के लिए आवश्यक हैं।

ऐसे राजमार्गों पर यातायात का;

(छ) कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत एक या अधिक कंपनियों का गठन करना ताकि कार्यों के कुशल निर्वहन को आगे बढ़ाया जा सके।

इस अधिनियम द्वारा उस पर अधिरोपित;

[(ज) अपने किसी भी कार्य को किसी भी व्यक्ति को ऐसे नियमों और शर्तों पर संलग्न करता है या सौंपता है जो निर्धारित किए जा सकते हैं;]

(i) संबंधित मामलों पर केंद्र सरकार को सलाह देना

राजमार्ग; टैन निर्माण कंपनी लिमिटेड v. ऑन ऑफ इंडिया एंड ओआरएस। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

ऐसे नियमों और शर्तों पर, जिन पर पारस्परिक रूप से सहमति हो सकती है, किसी भी राज्य सरकार को गठन में सहायता करना।

और राजमार्ग के लिए योजनाओं का कार्यान्वयन विकास;

समय-समय पर संशोधित राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956 की धारा 7 के तहत प्रदान की जाने वाली सेवाओं या लाभों के लिए केंद्र सरकार की ओर से शुल्क एकत्र करना और ऐसे नियमों और शर्तों पर राज्य सरकारों की ओर से ऐसे अन्य शुल्क जो ऐसी राज्य सरकारों द्वारा निर्दिष्ट किए जाएं; और ऐसे सभी कदम उठाएँ जो किसी शक्ति के प्रयोग के लिए आवश्यक या सुविधाजनक हों या आकस्मिक हों।

या इस अधिनियम द्वारा उसे प्रदत्त या अधिरोपित किसी कार्य का निर्वहन।

इस धारा में निहित अंग का अर्थ इस प्रकार किया जाएगा -

प्राधिकरण द्वारा किसी भी कानून की अवहेलना को अधिकृत करना

किसी व्यक्ति को किसी कर्तव्य या दायित्व के संबंध में कोई कार्यवाही शुरू करने के लिए प्राधिकृत करना जिसके लिए प्राधिकरण या इसके अधिकारी या अन्य कर्मचारी अन्यथा नहीं होंगे

इस अधिनियम के अधीन विषय।

द्वारा प्राधिकरण को सशर्त पूंजी और अनुदान

केन्द्रीय सरकार, द्वारा किए गए उचित विनियोग के बाद अर्थात्, इस संबंध में विधि द्वारा,

इस अधिनियम के तहत अपने कार्यों के निर्वहन के लिए या ऐसी शर्तों पर उससे जुड़े किसी भी उद्देश्य के लिए प्राधिकरण द्वारा आवश्यक कोई भी पूंजी प्रदान करें और शर्तें जो वह सरकार निर्धारित करे;

प्राधिकरण को ऐसे नियमों और शर्तों पर भुगतान करें, जैसे कि

केंद्र सरकार ऋण या अनुदान के माध्यम से ऐसी राशि निर्धारित कर सकती है जो सरकार द्वारा कुशल निर्वहन के लिए आवश्यक समझे।

इस अधिनियम के तहत अपने कार्यों का प्राधिकरण।

18. प्राधिकरण की निधियाँ। — (1) भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण कोष नामक एक कोष का गठन किया जाएगा और उसमें राशि जमा की जाएगी।

(क) प्राधिकरण द्वारा प्राप्त कोई अनुदान या सहायता;
((ख) प्राधिकरण द्वारा लिया गया कोई भी ऋण या कोई भी ऋण

उसके द्वारा;

(ग) प्राधिकरण द्वारा प्राप्त कोई अन्य राशि।

(2) इस कोष का उपयोग बैठक के लिए किया जाएगा।

(क) प्राधिकरण के अपने कार्यों के निर्वहन में उन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए खर्च जिनके लिए ऐसे अनुदान, ऋण या उधार प्राप्त किए जाते हैं और मामलों के लिए

इसके साथ जुड़ा हुआ या प्रासंगिक;

(ख) वेतन, भत्ते, अन्य पारिश्रमिक और सुविधाएँ

प्राधिकरण के सदस्यों, अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को प्रदान किया गया;

(ग) इसके द्वारा प्राधिकृत उद्देश्यों और उद्देश्यों पर व्यय।

एक्ट करें।

19. बजट। — प्राधिकरण प्रत्येक वित्तीय वर्ष में, जो भी निर्धारित किया जाए, ऐसे रूप में और ऐसे समय पर अपना बजट तैयार करेगा।

अगले वित्तीय वर्ष के लिए, प्राधिकरण की अनुमानित प्राप्तियों और व्यय को दर्शाते हुए और उसे केंद्र सरकार को अग्रेषित करें।

20. निधियों का निवेश। प्राधिकरण अपनी निधियों (किसी भी आरक्षित निधि सहित) को केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों में या इस तरह के अन्य तरीके से निवेश कर सकता है जो निर्धारित किया जाए।

21. प्राधिकरण की उधार लेने की शक्तियाँ। —

(1) प्राधिकरण, केंद्र की सहमति से

सरकार या केंद्र द्वारा उसे दिए गए किसी सामान्य या विशेष प्राधिकरण की शर्तों के अनुसार

सरकार, बांड, डिबेंचर या ऐसे अन्य साधनों को जारी करके किसी भी स्रोत से धन उधार लेती है जो उसे अपने सभी या किसी भी कार्य के निर्वहन के लिए उचित लगे। इस अधिनियम के तहत।

हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

(2) केंद्र सरकार जैसी सीमाओं के अधीन रहते हुए,

अस्थायी रूप से ओवरड्राफ्ट के माध्यम से या अन्यथा, जैसे राशि जिसकी उसे अपने कार्यों के निर्वहन के लिए आवश्यकता हो सकती है।

इस अधिनियम के तहत।

(3) केंद्र सरकार इस तरह से गारंटी दे सकती है

जैसा कि यह मूलधन का पुनर्भुगतान उचित समझता है और

उस पर ब्याज का भुगतान उप-धारा (1) के तहत प्राधिकरण द्वारा किए गए ऋण।

22. वार्षिक रिपोर्ट। प्राधिकरण इस रूप में तैयारी करेगा।

और प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ऐसे समय पर जो निर्धारित किया जाए, वार्षिक रिपोर्ट, जिसके दौरान इसकी गतिविधियों का पूरा लेखा-जोखा दिया जाता है

पिछला वित्तीय वर्ष, और इसकी एक प्रति केंद्र को प्रस्तुत करें।

सरकार।

23. लेखा और लेखा परीक्षा। प्राधिकरण के खाते

इस तरह से बनाए रखा जाए और लेखा परीक्षा की जाए जो परामर्श से हो सके भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के साथ, निर्धारित किया जाए

और प्राधिकरण केंद्र सरकार को पहले प्रस्तुत करेगा।

ऐसी तारीख जो निर्धारित की जाए, उसकी लेखाओं की लेखापरीक्षित प्रति

लेखा परीक्षकों के साथ मिलकर उस पर रिपोर्ट करते हैं।

24. वार्षिक रिपोर्ट और लेखा परीक्षक की रिपोर्ट पहले रखी जानी है।

संसद। केंद्र सरकार वार्षिक कारण बनाएगी

रिपोर्ट और लेखा परीक्षक की रिपोर्ट जितनी जल्दी हो सके रखी जाएगी

संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष उनका स्वागत किया जाता है। XXX

XXX

XXX

33. निर्देश जारी करने की केंद्र सरकार की शक्ति।

(1) इस अधिनियम के अन्य प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना,

प्राधिकरण अपने कार्यों और कर्तव्यों के निर्वहन में निम्नलिखित कार्य करेगा -

यह अधिनियम, नीति के प्रश्नों पर ऐसे निर्देशों से बाध्य होगा जैसे कि

(2) केंद्र सरकार का निर्णय कि क्या कोई सवाल है नीति में से एक है या नहीं, यह अंतिम होगा।

61. उपरोक्त अधिनियम की धारा 3 के तहत, प्राधिकरण

एक निगमित निकाय होना जिसमें एक अध्यक्ष और छह सदस्य होंगे।

छह अंशकालिक सदस्यों के साथ, सभी नियुक्त [2019] 17 एस. सी. आर.

केंद्र सरकार द्वारा। राष्ट्रीय राजमार्गों के संबंध में केंद्र सरकार की परिसंपत्तियों और देनदारियों को धारा 12 के तहत प्राधिकरण को हस्तांतरित किया जाता है। धारा 14 और 15 के तहत, प्राधिकरण की ओर से किए जा सकने वाले अनुबंध केवल तभी किए जा सकते हैं जब वे सरकार द्वारा पूर्व अनुमोदन के बाद एक निश्चित मूल्य से अधिक हों। धारा 16 प्राधिकरण के कार्यों से संबंधित है, जो यह स्पष्ट करती है कि ये सरकारी कार्य हैं जिन्हें केवल

सरकार या इस ओर से नियुक्त उसके प्रतिनिधि द्वारा।

और भारत के महालेखा परीक्षक, और केंद्र सरकार को प्रस्तुत किया गया, जिसे तब संसद के समक्ष रखा जाना है [एनएचएआई अधिनियम (उपरोक्त) की धारा 22 से 24 देखें]। धारा 33 के तहत, केंद्र सरकार नीति के प्रश्नों पर निर्देश जारी कर सकती है, जो तब प्राधिकरण के लिए बाध्यकारी होगा। 63. उपरोक्त प्रावधानों के संदर्भ में, जो बात स्पष्ट है वह यह है कि एनएचएआई एक सांविधिक निकाय है जो एक विस्तारित अंग के रूप में कार्य करता है।

केंद्र सरकार, और सरकारी कार्यों को करती है जिन्हें स्पष्ट रूप से दिवाला संहिता के तहत एक समाधान पेशेवर द्वारा या किसी अन्य कॉर्पोरेट निकाय द्वारा नहीं लिया जा सकता है। न ही ऐसा हो सकता है।

प्राधिकरण को अंततः दिवाला संहिता के तहत समाप्त कर दिया जाता है। इन सभी कारणों से, दिवाला संहिता की धारा 3 (7) में 'कॉर्पोरेट व्यक्ति' की परिभाषा को पढ़ने या पढ़ने के लिए डॉ. सिंघवी के तर्क को स्वीकार करना संभव नहीं है।

64. अन्यथा भी, इस आधार पर कि एन. एच. ए. आई. को दिवाला संहिता के तहत शामिल किया जा सकता है, इस न्यायालय ने के. किशन (उपरोक्त) मामले में कहा हैः

" 22. इस निर्णय के बाद, यह स्पष्ट हो जाता है कि परिचालन लेनदार समय से पहले या बाहरी विचारों के लिए या ऋण प्रवर्तन प्रक्रियाओं के विकल्प के रूप में दिवाला संहिता का उपयोग नहीं कर सकते हैं। दो लाख रुपये की एक छोटी राशि के लिए एक मध्यस्थ पुरस्कार में निहित परिचालन ऋण का खतरनाक परिणाम संभवतः कई करोड़ रुपये की एक अन्यथा विलायक कंपनी को खतरे में नहीं डाल सकता है। ऐसी कंपनी को यह कहने का अधिकार होगा कि वह हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v है।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

इसके खिलाफ पारित मध्यस्थता पुरस्कार को चुनौती देना, और केवल

पुरस्कार। ऐसा मामला स्पष्ट रूप से अनुच्छेद 38 के अंतर्गत आएगा। मोबिलॉक्स इनोवेशन्स [मोबिलॉक्स इनोवेशन्स (पी) लिमिटेड v. कीरूसा

सॉफ्टवेयर (पी) लिमिटेड, (2018) 1 एससीसी 353: (2018) 1 एस. सी. सी. (सी. वी.) 311]

के बीच पहले से चल रहे विवाद का मामला होने के नाते

9

उनके संबंध में न्यायनिर्णयन कार्यवाही के रूप में देय अभी भी हैं लंबित है। हम दोहराते हैं कि संहिता का उद्देश्य, कम से कम अब तक

जैसा कि परिचालन लेनदारों का संबंध है, दिवालियापन डालना है।

मौजूद है। XXX

XXX

XXX

इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसके खिलाफ धारा 34 याचिका दायर की गई है। एक मध्यस्थता पुरस्कार से पता चलता है कि एक पूर्व-मौजूदा विवाद जो

एक पुरस्कार में कार्यवाही के पहले चरण में समाप्त होता है,

पुरस्कार के बाद भी जारी रहता है, कम से कम अंतिम निर्णय तक

धारा 34 और 37 के तहत प्रक्रिया की गई है।

65. मामले के इस दृष्टिकोण में, जिस क्षण चुनौती दी जाती है

मध्यस्थता पुरस्कारों के लिए, एक परिचालन देनदार द्वारा देय राशि विवादित हो जाएगी, और इसलिए दिवाला संहिता के चंगुल से बाहर होगी। किसी भी दृष्टिकोण से देखने पर, इसलिए, दिवाला संहिता के तहत एनएचएआई के खिलाफ कार्यवाही

याचिकाकर्ता संख्या 1 संभव नहीं है।

66. डॉ. सिंघवी ने तब तर्क दिया कि धारा 5 (9) के तहत

दिवाला संहिता, 'वित्तीय स्थिति' को परिभाषित किया गया है, जिसे केवल एक समाधान पेशेवर की नियुक्ति के बाद ध्यान में रखा जाता है, और दिवाला संहिता की धारा 3 (12) के तहत 'चूक' का निर्णय लेते समय इसे ध्यान में नहीं रखा जाता है। इससे किसी भी तरह से यह स्थिति नहीं बनती है कि ऐसा प्रावधान

स्पष्ट रूप से मनमाना है। जैसा कि पायनियर अर्बन लैंड एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड और ए. एन. आर. में हमारे फैसले द्वारा माना गया है। वी. भारत संघ और ओआरएस। (2019) 8 एस. सी. सी. 416, दिवाला संहिता एक वसूली तंत्र के लिए नहीं है (पैराग्राफ 41 देखें)-[2019] 17 एस. सी. आर.

दिवाला संहिता के एक तंत्र होने का विचार जो इस क्रम में शुरू किया जाता है कि तनावग्रस्त परिसंपत्तियों का समाधान तब होता है। इस उद्देश्य के लिए, धारा 5 (6) के तहत 'विवाद', के तहत 'दावा' की परिभाषाएँ

धारा 3 (6), धारा 3 (11) के तहत 'ऋण' और धारा 3 (12) के तहत 'चूक', इन सभी को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए। इसके अलावा, दिवाला संहिता, जो आर्थिक कानून के दायरे से संबंधित है, एक उच्च सीमा को बढ़ाती है

चुनौती, संसद को जोड़ों में एक स्वतंत्र खेल छोड़ते हुए, जैसा कि स्विस रिबन (पी) लिमिटेड में आयोजित किया गया है। यू. ओ. आई. (2019) 4 एस. सी. सी. 17 (पैराग्राफ 17 से 24 देखें)। इन सभी कारणों से डॉ. सिंघवी के इस तर्क को खारिज किया जाना चाहिए। 67. डॉ. सिंघवी का यह तर्क कि उनके मुवक्किल को राहत देने के लिए संहिता में एक मामले को भरने की आवश्यकता है, फिर से मान्य नहीं है। यह तर्क कि एक आदेश VIII-एक सी. पी. सी. प्रकार का तंत्र गायब है, और हमारे द्वारा व्याख्या के माध्यम से प्रदान किया जा सकता है-कोई तीसरे पक्ष की प्रक्रिया नहीं है जिसके द्वारा याचिकाकर्ता जैसे व्यक्तियों को देय ऋण, योगदान या क्षतिपूर्ति के किसी सिद्धांत द्वारा, सार्वजनिक उपक्रमों पर तब लागू किया जा सकता है जब परिचालन ऋणदाता याचिकाकर्ता जैसे व्यक्तियों के खिलाफ दिवाला संहिता का आह्वान करते हैं-एक बार फिर एक तर्क है जिसका उत्तर यह कहते हुए दिया जाता है कि दिवाला संहिता एक ऋण वसूली कानून नहीं है।

68. श्री राय का यह तर्क कि दिवाला संहिता की धारा 5 (6) के तहत 'विवाद' की परिभाषा पक्षकारों की बात नहीं करती है एक विवाद, और इसलिए एक उप-ठेकेदार और प्रमुख नियोक्ता के बीच विवाद को शामिल करने के लिए व्याख्या की जा सकती है जिसके साथ उप-नियोक्ता

ठेकेदार के पास अनुबंध की कोई गोपनीयता नहीं हो सकती है, वह भी हमारे सामने खुद की सराहना नहीं करता है। दिवाला संहिता की धारा 5 (6) में 'विवाद' की परिभाषा तीन चीजों में से एक से संबंधित मुकदमे या मध्यस्थता कार्यवाही से संबंधित है-(ए) ऋण की राशि का अस्तित्व; (बी) माल या सेवा की गुणवत्ता; या (सी) प्रतिनिधित्व या वारंटी का उल्लंघन।

69. जहां तक (ए) का संबंध है, दिवाला संहिता की धारा 3 (11) में निहित 'ऋण' शब्द की परिभाषा एक दायित्व को संदर्भित करती है।

संबंध, जो कानून में पक्षों के बीच दायित्व या दायित्व को जन्म देता है। यही बात (ग) के लिए भी लागू होती है, क्योंकि प्रतिनिधित्व या वारंटी का उल्लंघन केवल एक संविदाकारी पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को किया जा सकता है। साथ ही, कब वस्तुओं या सेवाओं की गुणवत्ता का उल्लेख (ख) में किया गया है, यह फिर से किसी संविदात्मक या अन्य कानूनी संबंध को अभिनिर्धारित करता है जिसके द्वारा एक पक्ष दूसरे पर मुकदमा कर सकता है।

हिंडन कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड v. भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

70. मोबिलॉक्स (सुप्रा) में, की परिभाषा निर्धारित करने के बाद

' विवाद ', इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

" 34. इसलिए, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को अधिनियम की धारा 9 के तहत एक आवेदन की जांच करते समय यह निर्धारित करना होगाः

आई. क्या 1 लाख रुपये से अधिक का "परिचालन ऋण" परिभाषित किया गया है? (अधिनियम की धारा 4 देखें)

ii. क्या आवेदन के साथ प्रस्तुत दस्तावेजी साक्ष्य से पता चलता है कि उपरोक्त ऋण देय है और

देय है और अभी तक भुगतान नहीं किया गया है? और

iii. क्या पक्षकारों के बीच विवाद का अस्तित्व है या किसी मुकदमे के लंबित होने का रिकॉर्ड या संबंध में अवैतनिक परिचालन ऋण की मांग सूचना की प्राप्ति से पहले दायर मध्यस्थता कार्यवाही का रिकॉर्ड है।

ऐसे विवाद के लिए?

यदि उपरोक्त शर्तों में से किसी एक की कमी है, तो आवेदन को अस्वीकार करना होगा। उपरोक्त के अलावा, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को धारा 9 के अधिदेश का पालन करना चाहिए, जैसा कि ऊपर उल्लिखित है, और विशेष रूप से अधिनियम की धारा 9 (5) के अधिदेश का पालन करना चाहिए, और आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करना चाहिए, जैसा भी मामला हो।

अधिनियम की धारा 9 (5) में उल्लिखित कारकों पर।

71. इसलिए यह स्पष्ट है कि एक विवाद पक्षों के बीच होना चाहिए जैसा कि दिवाला संहिता के तहत समझा जाता है, जिसमें शामिल नहीं है

आदेश VIII-एक सी. पी. सी. प्रकार तंत्र। इसलिए इस तर्क को भी खारिज किया जाना चाहिए।

72. इन सभी कारणों से, जहां तक वर्तमान रिट याचिकाओं का संबंध है, हम दिवाला संहिता के प्रावधानों के लिए चुनौती पाते हैं।

पूरी तरह से योग्यता से रहित होना।

तथ्यों पर निष्कर्ष

73. 16.08.2019 पर दायर 2019 की रिट याचिका संख्या 1074 में याचिकाकर्ता कंपनी ने आरोप लगाया था कि 6070 करोड़ रुपये की राशि का भुगतान किया गया था।

2008 से 2019 तक विभिन्न मध्यस्थता पुरस्कारों के तहत याचिकाकर्ता कंपनी को दी गई राशि जिसे प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा विभिन्न न्यायालयों के समक्ष चुनौती दी गई थी, लेकिन जिनके संचालन

पर ऐसी अदालतों द्वारा रोक नहीं लगाई गई थी। इस तथ्यात्मक आधार पर, याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों से उक्त राशि के पुनर्भुगतान के लिए इस न्यायालय से अंतरिम राहत मांगी, ताकि वह [2019] 17 एस. सी. आर. का पुनर्भुगतान कर सके।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अपने स्वयं के परिचालन लेनदारों के लिए इसका बकाया। इस न्यायालय ने 2019 की रिट याचिका संख्या 1074 में अपने दिनांकित 13.09.2019 आदेश में निम्नानुसार दर्ज कियाः

राष्ट्रीय कंपनी कानून के समक्ष आगे की कार्यवाही पर रोक लगाना है न्यायाधिकरण, और दूसरा प्रत्यर्थी संख्या को निर्देशित करना है। 5-8 - संघ

भारत सरकार, भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण, एनएचपीसी लिमिटेड,

किसी भी न्यायालय द्वारा 6,070 करोड़ रुपये की राशि। डॉ. सिंघवी, विद्वान वरिष्ठ वकील, कहते हैं कि उनके मुवक्किल भुगतान करेंगे

इन दो अंतर्वर्ती अनुप्रयोगों में परिचालन लेनदारों,

रुपये की राशि। 8. 81 करोड़ और 26.21 करोड़ की अवधि के भीतर

12 आज से सप्ताह। हम उपरोक्त कथन दर्ज करते हैं।

हम दोनों वार्तालापों में उत्तरदाताओं को नोटिस भी जारी करते हैं

अनुप्रयोग।

दस्ती सेवा की भी अनुमति है।

04 अक्टूबर, 2019 को मामले को सूचीबद्ध करें।

डॉ. सिंघवी आगे कहते हैं कि यह आदेश जो हमारे द्वारा पारित किया गया है

11 बजेः 45 आज सुबह, एनसीएलटी को मौखिक रूप से सूचित किया जाएगा

जाहिरा तौर पर, जो आज इन मामलों को उठा रहा है।

(जोर दिया गया)

74. हालाँकि, अपने जवाबी हलफनामे दिनांक 21.10.2019 में, संघ ने

भारत सरकार ने तर्क दिया कि यह प्रार्थना 'तथ्यात्मक रूप से गलत' और 'जानबूझकर भ्रामक' थी। भारत संघ ने याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में उनके खिलाफ मध्यस्थता पुरस्कारों की स्थिति के संबंध में इस न्यायालय के समक्ष इरकॉन, एनएचपीसी और एनएचएआई द्वारा दायर चार्ट को पुनः प्रस्तुत किया

((i) याचिकाकर्ता कंपनी और प्रतिवादी पीएसयू के बीच अनुबंध का मूल्य; (ii) उक्त अनुबंध के तहत प्रतिवादी पीएसयू द्वारा याचिकाकर्ता को पहले से ही भुगतान की गई राशि; (iii) मध्यस्थता में प्रतिवादी पीएसयू के खिलाफ याचिकाकर्ता का मूल दावा; (iv) मध्यस्थता में याचिकाकर्ता के पक्ष में दी गई राशि; (v) द्वारा भुगतान/जमा की गई राशि।

प्रत्यर्थी सार्वजनिक उपक्रम जिसके द्वारा सक्षम न्यायालय ने रोक दी थी; (vi) याचिकाकर्ता को देय शेष राशि; और (vii) क्या मध्यस्थ हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड के संबंध में सक्षम न्यायालयों द्वारा रोक आदेश दिए गए थे।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

पुरस्कार। इन चार्टों के आधार पर, भारत संघ ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता कंपनी ने जानबूझकर इस तथ्य को दबा दिया था कि इन प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों ने इनमें से कुछ मध्यस्थता पुरस्कारों के संबंध में उनके पक्ष में स्थगन आदेश दिए थे, और ये सार्वजनिक उपक्रम पहले ही मध्यस्थता पुरस्कारों के तहत उनके द्वारा देय पर्याप्त राशि (लगभग 83.30%) का भुगतान/जमा कर चुके थे, जिसके बाद इन मध्यस्थता पुरस्कारों के संबंध में स्थगन आदेश दिए गए थे। चार्ट में उल्लिखित आंकड़ों को काउंटर एफिडेविट में एक तालिका में संक्षेप में संक्षेपित किया गया था, जिसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

पीएसयू का नाम

कुल राशि

कुल राशि

पसंदीदा पुरस्कार

द्वारा भुगतान/निर्वासित

याचिकाकर्ता का

पीएसयू पेंडिंग द

सांख्यिकीय चुनौती

पुरस्कार का

1063.82

932.03

एनएचपीसी एनएचएआई

2343.23

2025.62

268.10

119.06

इरकॉन

116.15

81.70

एनटीपीसी

	3158.41 [83.30 %]
कुल	3791.30

(आई. एन. आर. करोड़ में आंकड़े)

75. उल्लेखनीय रूप से, भारत संघ ने आरोप लगाया कि कोई भी रोक नहीं है इन मध्यस्थता पुरस्कारों के संबंध में प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा प्राप्त आदेश स्वतः स्थगन मोड के तहत या 2019 संशोधन अधिनियम की धारा 87 के तहत थे। इसके बजाय, यह तर्क दिया गया कि उक्त रोक सक्षम न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा दायर एक आवेदन पर, गुण-दोष के आधार पर उक्त आवेदन की सुनवाई पर और इस शर्त पर आदेश दिए गए थे कि मध्यस्थता पुरस्कारों के कुछ हिस्सों का भुगतान/न्यायालय में जमा किया जाए।

76. भारत संघ ने भी याचिकाकर्ता का दृढ़ता से खंडन किया कंपनी का तर्क है कि वह गैर [2019] 17 एस. सी. आर. के कारण वित्तीय संकट में थी।

प्रत्यर्थी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा उसे देय संविदात्मक बकाया का भुगतान, जिसने कथित रूप से इसे अपने विभिन्न लेनदारों द्वारा संहिता के तहत आगे बढ़ने के लिए अतिसंवेदनशील बना दिया। भारत संघ ने आरोप लगाया कि याचिकाकर्ता लगभग सभी मामलों में अनुबंध की राशि का भुगतान किया गया है, यहां तक कि वृद्धि के साथ भी। वास्तव में, जवाबी हलफनामे में यह तर्क दिया गया था कि

याचिकाकर्ता कंपनी को प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों (लगभग 117%) द्वारा प्रारंभिक अनुबंध मूल्य से अधिक का भुगतान किया गया था। भारत संघ ने आगे तर्क दिया कि याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा प्रत्यर्थी सार्वजनिक उपक्रमों के खिलाफ किए गए अधिकांश दावे इसके दायरे से बाहर हैं।

मूल अनुबंध मूल्य-जैसे 'लाभ की हानि' आदि-जिसका किसी भी स्थिति में कंपनी की वित्तीय स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। भारत संघ ने आरोप लगाया कि यह 'बिल्कुल गलत' है कि याचिकाकर्ता कंपनी को प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा बकाया का भुगतान न करने के कारण दिवालिया कर दिया गया था।

77. याचिकाकर्ता कंपनी ने तब इस अदालत के समक्ष दिनांक 04.11.2019 का एक अतिरिक्त हलफनामा दायर किया, जिसमें उसने स्वीकार किया कि 31.08.2019 पर, याचिकाकर्ता कंपनी को, जबकि प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों से INR 6373.82 करोड़ की राशि बकाया थी, अदालत के आदेशों के माध्यम से पहले ही INR 951.51 करोड़ और NITI आयोग योजना के माध्यम से INR 1530.89 करोड़ (कुल INR 2482.4 करोड़) प्राप्त हो चुके थे। याचिकाकर्ता कंपनी तब स्वयं भारत संघ द्वारा अपने जवाबी हलफनामे में दर्ज किए गए कुछ आंकड़ों और बयानों को गलत बताते हुए चुनौती दी गई, विशेष रूप से मध्यस्थता के संबंध में अदालती कार्यवाही की स्थिति पर-याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में निर्णय।

78. प्रतिद्वंद्वी विवादों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि दोनों पक्षों के बीच निम्नलिखित के संबंध में एक तथ्यात्मक विवाद हैः (I) मध्यस्थता की सटीक मात्रा-प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों से याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में देय पुरस्कार; (II) वह राशि जो प्रतिवादी सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा पहले ही भुगतान की जा चुकी हो और/या उनके पक्ष में जमा की जा चुकी हो।

या नहीं। 79. यह तय कानून है कि संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय, यह न्यायालय विवादित तथ्यों की विस्तृत जांच शुरू नहीं कर सकता है। गुलाबदास एंड कंपनी बनाम मामले में इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की पीठ। अस्स्टेट। सीमा शुल्क कलेक्टर ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 733 को अनुच्छेद 32 के तहत दायर रिट याचिकाओं के एक समूह से जब्त कर लिया गया था, जिसमें हिंदुस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v.

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

याचिकाकर्ताओं (जो स्थिर वस्तुओं के भारतीय आयातक थे) ने आरोप लगाया कि केंद्रीय राजस्व बोर्ड ने लागू करके गलत तरीके से काम किया था

उनके द्वारा आयातित 'क्रेयॉन' पर कर, जो कर योग्य नहीं थे, गलत तरीके से उन्हें 'रंगीन पेंसिल' मानते हुए। इन रिट याचिकाओं को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

" 15. यह तर्क कि विवादित आदेश स्पष्ट रूप से हैं

गलत है, क्योंकि "क्रेयॉन" को 'रंगीन' माना गया है

'पेंसिल' एक विवाद नहीं है जिस पर विचार किया जा सकता है

संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत आवेदन। इसका कोई असर नहीं है।

क्या पहले यह निर्धारित किए बिना प्रश्न का निर्णय लिया जा सकता है कि क्या एक 'रंगीन पेंसिल और एक के बीच अंतर का गठन करता है

‘ क्रेयॉन ', एक अंतर जिसके लिए एक जांच की आवश्यकता होनी चाहिए

विवादित तथ्य और सामग्री। यह सीमा शुल्क का मामला था

निर्णय लेने के लिए अधिकारी, और यह स्पष्ट है कि यह न्यायालय नहीं कर सकता है

संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक आवेदन, शुरू ऐसी जाँच "।

(जोर दिया गया)

80. सुरेंद्र प्रसाद में भी इसी तरह का निर्णय लिया गया है।

खुग्सल बनाम। अध्यक्ष, एम. एम. टी. सी. 1994 सप. (1) एस. सी. सी. 87, जहाँ इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

" 6. हमने सभी याचिकाओं में दोनों पक्षों को सुना है।

लंबाई। सभी याचिकाओं में याचिकाकर्ता इस पर अपनी निर्भरता रखते हैं -

एम. एम. आर. खान मामले में निर्णय [1990 सप एस. सी. सी. 191:

1990 एससीसी (एल एंड एस) 632: (1991) 16 एटीसी 541]। लेकिन हम पाते हैं

वैधानिक कैंटीन और मान्यता प्राप्त गैर दोनों में कर्मचारी उन मामलों में तथ्यों के आधार पर वैधानिक कैंटीन का निर्णय लिया गया था

और रेलवे बोर्ड द्वारा समय-समय पर जारी किए गए परिपत्र और में नियोजित श्रमिकों से संबंधित अन्य दस्तावेज

वहाँ का विचार संबंधित श्रमिकों के लिए प्रासंगिक है वर्तमान कैंटीन। दूसरी ओर, विवादित तथ्य हैं

वर्तमान मामले में जिसे रिट याचिका में हल नहीं किया जा सकता है

अनुच्छेद 32 के तहत। इसलिए, हम पाते हैं कि यह न्यायालय नहीं है

वर्तमान विवादों को तय करने के लिए उचित मंच।

(जोर दिया गया)

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

81. हाल ही में, यह न्यायालय सुमेधा नागपाल बनाम. की स्थिति

दिल्ली (2000) 9 एस. सी. सी. 745 आयोजितः

" 2. दोनों पक्ष मानते हैं कि हिरासत का सवाल

बच्चे को अंततः उत्पन्न होने वाली कार्यवाही में तय करना होगा

संरक्षक और वार्ड अधिनियम की धारा 25 के तहत धारा के साथ पढ़ा जाता है

याचिकाकर्ता द्वारा इस मामले में आरोप लगाए गए हैं और उत्तरदाता 2 एक-दूसरे के विरुद्ध परिस्थितियों का वर्णन करते हुए

अलगाव कैसे हुआ और उनमें से प्रत्येक कैसे है

बच्चे की अभिरक्षा का अधिकार। चूँकि ये विवादित तथ्य हैं,

जब तक कि पक्षों द्वारा उठाए गए अभिवचनों की जांच नहीं की जाती है

एक उपयुक्त मंच द्वारा साक्ष्य का संदर्भ, एक उचित निर्णय

मामले में नहीं लिया जा सकता है और इस तरह का एक पाठ्यक्रम असंभव है

एक संक्षिप्त कार्यवाही जैसे अनुच्छेद 32 के तहत रिट याचिका

संविधान "।

(जोर दिया गया)

82. इसलिए यह न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं कर सकता है।

संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत मध्यस्थता के अनुसार भुगतान/जमा किए गए धन की स्थिति निर्धारित करने के लिए एक विस्तृत जांच की जाती है।

याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में पुरस्कार। नतीजतन, वर्तमान कार्यवाही में इसके संबंध में कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है।

83. डॉ. सिंघवी ने तब तर्क दिया कि नीति आयोग कार्यालय का

05.09.2016 दिनांकित ज्ञापन, जिसमें एक योजना शामिल थी जिसके द्वारा ठेकेदार सम्मानित राशि का 75 प्रतिशत एक साथ प्राप्त करने में सक्षम थे।

उस पर ब्याज के साथ-जिसे "भुगतान राशि" के रूप में संदर्भित किया जाता है-केवल एक सीमित सीमा तक मनमाना है। उनका इस तथ्य से कोई विवाद नहीं था कि भुगतान राशि को सुरक्षित करने के लिए योजना के तहत बैंक गारंटी दी जानी चाहिए, लेकिन उन्होंने तर्क दिया कि भुगतान राशि पर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष की अतिरिक्त बैंक गारंटी, जो तब वार्षिक रूप से चक्रवृद्धि की जाती है, मनमाना है और इसे अनुच्छेद 14 के तहत रद्द कर दिया जाना चाहिए। यह अलग करने योग्य होने के कारण, उन्होंने तर्क दिया कि यह योजना बनी रह सकती है, जिसमें प्रति वर्ष 10 प्रतिशत की 'टॉप अप' बैंक गारंटी की आवश्यकता को समाप्त कर दिया गया है। एक नजर दिनांकित 05.09.2016 परिपत्र से पता चलता है कि योजना इस क्रम में है कि निर्माण क्षेत्र द्वारा महसूस की जाने वाली कठिनाई, स्वचालित के लिए धन्यवाद

मूल रूप से अधिनियमित धारा 36 के तहत रोक व्यवस्था को कम किया जाए। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि यह योजना इसलिए है ताकि निर्माण क्षेत्र अपने पक्ष में मध्यस्थता पुरस्कारों का लाभ प्राप्त कर सके, जो अन्यथा हिंदूस्तान निर्माण कंपनी लिमिटेड v नहीं था।

भारत और ओआरएस का संघ। [आर. एफ. नरीमन, जे.]

कानून के तहत उस समय उपलब्ध। डॉ. सिंघवी के मुवक्किल परिपत्र की शर्तों का लाभ उठाने या उक्त परिपत्र का लाभ नहीं उठाने के लिए स्वतंत्र थे। परिपत्र में निहित लाभ का लाभ उठाने के बाद, उनके मुवक्किल के लिए अब यह कहना संभव नहीं है कि इस लाभ का लाभ उठाने के वर्षों बाद, परिपत्र का एक हिस्सा कठिन है और इसे रद्द कर दिया जाना चाहिए। अन्यथा भी, हम योजना का लाभ उठाने के लिए प्रति वर्ष 10 प्रतिशत अतिरिक्त बैंक गारंटी की आवश्यकता में कुछ भी मनमाना नहीं पाते हैं। यदि यह योजना पूरी नहीं होती और एक वर्ष के भीतर समाप्त हो जाती तो इस 10 प्रतिशत अतिरिक्त बैंक गारंटी की कोई आवश्यकता नहीं होती।

केवल इसलिए कि ठेकेदारों को वितरित की गई भुगतान राशि के 75 प्रतिशत के लिए बैंक गारंटी का नवीनीकरण किया जा सकता है, इस शर्त को कठिन कहा जाता है। हम पाते हैं कि वास्तव में 10 प्रतिशत अतिरिक्त बैंक गारंटी केवल यह सुनिश्चित करने के लिए है कि प्रति वर्ष आगे के ब्याज घटक को भी कवर किया जाए, ताकि सरकार/सरकारी निकाय

बैंक गारंटी को भुनाने की स्थिति में इन राशियों का दावा करने में सक्षम हैं। इसलिए, हम इस याचिका में कोई सार नहीं पाते हैं और इसे अस्वीकार करते हैं।

84. इसके आलोक में सभी रिट याचिकाओं का निपटारा किया जाता है।

निर्णय।

85. तदनुसार, एम. ए. सं. 2140-2144 सी. ए. में 2019 का Nos.2621

2625 2019 की अनुमति प्रार्थना (ए) के संदर्भ में दी गई है। देविका गुजराल

लिखित

याचिकाओं का निपटारा किया जाता है।